राजसिंह

उच्चकोटि का मौलिक ऐतिहासिक नाटक

आचार्य चतुरसेन

प्रभात प्रकाशन
दिल्ली • मथुरा

प्रकाशक :
शिवचरनलाल गुप्ता
प्रभात प्रकाशन
२०५, चावड़ी बाजार,
दिल्ली-६.

०

लेखक :
आचार्य चतुरसेन

०

०

सन् १६६१ ई०

०

मुद्रक :
बलवीरसिंह बघेल
जवाहर प्रिंटिंग प्रेस,
नौगजा, मथुरा.

०

मूल्य :
साढ़े तीन रुपया

नाटक के पात्र

पुरुष पात्र

राजसिंह	...	उदयपुर के राणा
जयसिंह	...	राणा के कुँवर
भीमसिंह	...	,,
रावत रघुनाथसिंह	...	राणा के सरदार
,, मेघसिंह	...	,,
,, केसरीसिंह	...	,,
,, जमराज	...	,,
,, भावसिंह	...	,,
राठौर जोधासिंह	...	,,
महाराज मनोहरसिंह	...	,,
,, दलसिंह	...	,,
,, अरिसिंह	...	,,
झाला चन्द्रसेन	...	,,
दुर्गादास राठौर	...	जोधपुर के राजा के सरदार
मोनक	...	,,
फतहसिंह	...	राणा का दीवान
अनन्त मिश्र	...	रूपनगर का ब्राह्मण
गरीबदास	...	राणा का पुरोहित
रूपसिंह	...	रूपनगर के राजा
रामसिंह	...	,,
विक्रमसिंह	..	,,

प्रकाशक :
शिवचरनलाल गुप्ता
प्रभात प्रकाशन
२०५, चावड़ी बाजार,
दिल्ली-६.

लेखक :
आचार्य चतुरसेन

सन् १९६१ ई०

मुद्रक :
बलबीरसिंह बघेल
जवाहर प्रिंटिंग प्रेस,
नौगजा, मथुरा.

मूल्य :
साढ़े तीन रुपया

नाटक के पात्र

पुरुष पात्र

राजसिंह	...	उदयपुर के राणा
जयसिंह	...	राणा के कुँवर
भीमसिंह	...	"
रावत रघुनाथसिंह	...	राणा के सरदार
" मेघसिंह	...	"
" केसरीसिंह	...	"
" जसराज	...	"
" भावसिंह	...	"
राठौर जोधसिंह	...	"
महाराज मनोहरसिंह	...	"
" दलसिंह	...	"
" अरिसिंह	...	"
झाला चन्द्रसेन	...	"
दुर्गादास राठौर	...	जोधपुर के राजा के सरदार
गोनक	...	"
फतहसिंह	...	राणा का दीवान
अनन्त मिश्र	...	रूपनगर का ब्राह्मण
गरीबदास	...	राणा का पुरोहित
रूपसिंह	...	रूपनगर के राजा
रामसिंह	...	"
विक्रमसिंह	..	"

औरंगजेब	...	दिल्ली का बादशाह
अकबर	...	शाहजादे
मुअज्जम	...	"
इनायताजखाँ	...	श ही सिपहसालार
तहब्बुरखाँ	...	"
दिलेरखाँ	...	"

सिपाही, प्यादे, नौकर, किसान, नागरिक, दास, दासी वगैरा।

स्त्री पात्र

कृष्णकुँवर	...	राणा राजसिंह की रानी
चारुमती	...	रूपनगर की राजकुमारी
निर्मला	...	चारुमती की सखी
जेबुन्निसा	...	बादशाह की बेटी
उदयपुरी	...	बादशाह की बेगम
कमलकुमारी	...	जयसिंह की रानी
सुहागसुन्दरी	...	रत्नसिंह की रानी

दासी, बाँदी आदि।

महाराणा राजसिंह राजपूताना के प्रकाशमान नक्षत्र थे। उन्होंने समस्त राजपूत-शक्ति के निस्तेज होने पर भी अपनी आत्म-शक्ति और साधारण सत्ता से प्रबल-प्रतापी मुगल बादशाह औरंगजेब का बड़ी मुस्तैदी और योग्यता से मुकाबिला किया। राजसिंह की विशेषता, राजपूतों की वह प्राचीन प्रसिद्ध जूझ मरने की भावना नहीं, अपितु विलक्षण सेना-नायकत्व रण-पाण्डित्य, दूरदर्शिता और साहस है। उन्होंने अस्तंगत राजपूत-सत्ता को एकबार अपने पराक्रम से फिर से उभारा। उन्हीं की बदौलत औरंगजेब की बढ़ती हुई हिन्दू-मन्दिरों के विध्वंस की प्रवृत्ति रुकी। उन्हीं की सहायता और आश्रय पाकर राठौरों ने विपत्ति-सागर से उद्धार पाया और अन्त में मुगल-तख्त का भाग्य उनके हाथ का खिलौना बना। राजसिंह ने बड़ी-से-बड़ी राजनैतिक विपत्तियाँ अपने सिर पर दूसरों के लिए लीं। जजिया के विरोध में उनका औरंगजेब के नाम लिखा हुआ प्रसिद्ध पत्र उनके साहस और ओज का परिचायक है। वे अपने युग में हिन्दुत्व का प्रतिनिधित्व करते थे। उनका जीवन एक हिन्दू प्रतिनिधि के नाते उस काल के समस्त भारत के हिन्दुओं में अप्रतिम था। उनके व्यक्तित्व से हिन्दुओं को बहुत जीवन मिला था। कहना चाहिए कि आधुनिक उदयपुर की गद्दी की दृढ़ता का बहुत अंश तक राजसिंह ही कारण हैं।

उनका जन्म सन् १६२९ में २४ सितम्बर को हुआ। और सन् १६५२ की १० वीं अक्टूबर में २३ वर्ष की आयु में गद्दी

औरंगजेब	...	दिल्ली का वादशाह
अकबर	...	शाहजादे
मुअज्जम	...	"
इक्काताजखाँ	...	शाही सिपहसालार
तहव्वुरखाँ	...	"
दिलेरखाँ	...	"

सिपाही, प्यादे, नौकर, किसान, नागरिक, दास, दासी वगैरा।

स्त्री पात्र

कृष्णकुँवर	...	राणा राजसिंह की रानी
चारुमती	...	रूपनगर की राजकुमारी
निर्मला	...	चारुमती की सखी
जेबुन्निसा	...	वादशाह की बेटी
उदयपुरी	...	वादशाह की बेगम
कमलकुमारी	...	जयसिंह की रानी
सुहागसुन्दरी	...	रत्नसिंह की रानी

दासी, बाँदी आदि।

महाराणा राजसिंह राजपूताना के प्रकाशमान नक्षत्र थे। उन्होंने समस्त राजपूत-शक्ति के निस्तेज होने पर भी अपनी आत्म-शक्ति और साधारण सत्ता से प्रबल-प्रतापी मुगल बादशाह औरंगजेब का बड़ी मुस्तैदी और योग्यता से मुकाबिला किया। राजसिंह की विशेषता, राजपूतों की वह प्राचीन प्रसिद्ध जूझ मरने का भावना नहीं, अपितु विलक्षण सेना-नायकत्व रण-पाण्डित्य, दूरदर्शिता और साहस है। उन्होंने अस्तंगत राजपूत-सत्ता को एकबार अपने पराक्रम से फिर से उभारा। उन्हीं की बदौलत औरंगजेब की बढ़ती हुई हिन्दू-मन्दिरों के विध्वंस की प्रवृत्ति रुकी। उन्हीं की सहायता और आश्रय पाकर राठौरों ने विपत्ति-सागर से उद्धार पाया और अन्त में मुगल-तख्त का भाग्य उनके हाथ का खिलौना बना। राजसिंह ने बड़ी-से-बड़ी राजनैतिक विपत्तियाँ अपने सिर पर दूसरों के लिए लीं। जजिया के विरोध में उनका औरंगजेब के नाम लिखा हुआ प्रसिद्ध पत्र उनके साहस और ओज का परिचायक है। वे अपने युग में हिन्दुत्व का प्रतिनिधित्व करते थे। उनका जीवन एक हिन्दू प्रतिनिधि के नाते उस काल के समस्त भारत के हिन्दुओं में अप्रतिम था। उनके व्यक्तित्व से हिन्दुओं को बहुत जीवन मिला था। कहना चाहिए कि आधुनिक उदयपुर की गद्दी की दृढ़ता का बहुत अंश तक राजसिंह ही कारण हैं।

उनका जन्म सन् १६२६ में २४ सितम्बर को हुआ। और सन् १६५२ की १० वीं अक्टूबर में २३ वर्ष की आयु में गद्दी

नशीनी हुई। उसी वर्ष उन्होंने श्री एकलिंगजी में जाकर रत्नों का तुलादान किया, जो भारतवर्ष के इतिहास में एकमात्र उदाहरण है। सन् १६५३ की ४ फरवरी को उनका राज्याभिषेक हुआ और चाँदी का तुलादान किया। इसी अवसर पर शाहजहाँ ने उन्हें राणा का खिताब, पाँच हजारी जात और पाँच हजार सवारों का मनसब देकर जड़ाऊ तलवार, हाथी, घोड़े वगैरा भेजे। परन्तु राजसिंह ने गद्दी पर बैठते ही चित्तौड़ के किले की मरम्मत शुरु कर दी। इस खबर को सुनकर शाहजहाँ अजमेर ख्वाजा की दरगाह की जियारत करने के बहाने से आया और अब्दालबेग को किले की मरम्मत देखने को भेजा। और जब उसने लौटकर बताया कि पश्चिम की ओर सात दर्वाजों की मरम्मत कर ली गई है और कई नवीन दर्वाजे बना लिए गए हैं। जो जगहें ऐसी थीं जहाँ चढ़ना सम्भव हो सकता था वहाँ दीवारें खड़ी कर ली गई हैं। तब बादशाह ने सादुल्लाखाँ वजीर आला को तीस हजार फौज के साथ तमाम मरम्मत ढहाने के लिए भेजा। उस समय राणा ने लड़ना उचित न समझ बादशाह से माँफी माँगली और पाटवी कुँवर को जिनका नाम बादशाह ने सौभाग्यसिंह रखा था, भेज दिया।बादशाह ने कुँवर को छः दिन पास रखकर हाथी, घोड़ा और सिरोपाव देकर विदा किया। परन्तु ज्योंही शाहजहाँ बीमार पड़ा और शाहजादों में गद्दी के उत्तराधिकार की गड़बड़ चली कि इस सुयोग से लाभ उठाकर राणा ने अपने पुराने परगने वापिस ले लिए। और जो-जो हिन्दू सरदार सादुल्लाखाँ के साथ चित्तौड़ का किला ढहाने आए थे, एक-एक को भली-भाँति दण्ड दिया गया। उधर समूनगर के युद्ध में दारा का भाग्य फूटा और बाप को कैद करके औरङ्गजेब तख्त पर बैठा। वह पहले ही से राणा को

मिलाने को खट-पट करता रहा था। विजयी होने पर उसने राणा की पद-वृद्धि कर छः हजार जात व छः हजार सवार का फरमान भेजा और पांच लाख रुपए तथा एक हाथी और हथिनी भेजी। साथ ही कुछ परगने वापिस कर दिए। राणा कूटनीतिज्ञ औरङ्गजेब के इस व्यवहार पर पिघल गए और दारा की मदद न की। हालांकि उसने सिरोही में शरण लेने के बाद राणा को एक करुण पत्र लिखा था। अगर उस समय महाराणा और राठौर जसवन्तसिंह मिलकर दारा की सहायता करते तो भारत के इतिहास का कुछ और ही रङ्ग होता।

अस्तु ! इधर राणा अपने भीतरी संगठन में लगे, उधर औरंगजेब ने अकण्टक हो अपने हाथ-पैर निकाले। उसकी मुल्ला वृत्ति और पक्षपातपूर्ण शासन तथा पिता और परिवार के साथ किए दुर्व्यवहार के कारण हिन्दुओं में काफी असन्तोष फैल गया और घटनाचक्र से राजसिंह बादशाह के भारी कोप-भाजन बन गए। राजसिंह को परिस्थिति से विवश हो भारी-भारी शाही अपराध करने पड़े। उन्होंने बादशाह की मंगेतर रूपनगर की राजकन्या से ब्याह किया। गोवर्धन के गुसांइयों को नाथद्वारा और कांकरोली में आश्रय दिया। जसवन्तसिंह के पुत्र को शरण दी। सबसे अधिक बादशाह को जजिया के विरुद्ध उपदेश दिया। इन सब कारणों से रुष्ट होकर बादशाह अपनी समस्त सेना को ले मेवाड़ पर चढ़ दौड़ा। परन्तु दुर्गम अरावली की गोद में मेवाड़ का राजवंश और जनता आश्रय पाकर अल्पशक्ति होने पर भी बादशाह को तंग करने में सफल हुए।

सन् १६७६ की ३ सितम्बर को बादशाह ने महाराणा से लड़ने के लिए दिल्ली से प्रस्थान किया और तेरह दिन कूंच करके अजमेर में आनासागर पर पड़ाव डाला। शाहजादा अक-

वर जो पालम में मुकीम था, पहले ही अजमेर को रवाना कर दिया गया था। बादशाह की चढ़ाई की खबर पाते ही राणा ने अपने प्रमुख सरदारों को बुला युद्ध-सभा की। इस सभा में कुं० जयसिंह, कुं० भीमसिंह, रावल,जसराज, (डूंगरपुर का) राणावत भावसिंह (म० अमरसिंह के पुत्र सूरजमल का तीसरा पुत्र) महाराज मनोहरसिंह, (म० कर्णसिंह के पुत्र गरीबदास के पुत्र) महाराज दलसिंह, (म० कर्णसिंह के छोटे पुत्र छत्रसिंह के पुत्र) अरिसिंह (महाराणा के भाई) अरिसिंह के चार पुत्र (भगवानसिंह सुभागसिंह, फतहसिंह, गुमानसिंह) राव सबलसिंह चौहान (वेदले वाला) झाला चन्द्रसेन (बड़ी सादड़ी वाला) रावत केसरीसिंह और उसका पुत्र गंगादास (बानसी वाले) झाला जैतसिंह (देलवाडे का) पंवार वैरिसाल (बीजोलिया का) रावत महासिंह (बेगुंवाला) रावत रत्नसिंह (सलूंबर का) सांवलदास (बदनौर का) रावत मानसिंह (कानोड़वाला) राव केसरीसिंह (पारसौली का) महकमसिंह (भींडरवाला) राठौर दुर्गादास, राठौर सौनक, विक्रम सोलंकी, रावत रुक्मांगद (कोठारिए का) झाला जसवन्त (गोगूंदे का) राठौर गोपीनाथ (घाणेराव का) राजपुरोहित गरीबदास, मेहता अमरसिंह (नीमड़ी का) खीची रामसिंह, डोडिया महासिंह, मन्त्री दयालदास और अबूमलिक अजीज उपस्थित थे।

सलाह यह ठहरी कि सब कोई पर्वतों में चले जांय और वस्तियां उजाड़ दी जांय। पचास हजार भील और बहुत से भोमिए सरदार यहां राणा से आ मिले। नेणवारा (भोमट) में राणा का परिवार मुकीम हुआ। राणा के पास सिर्फ बीस हजार सवार और पच्चीस हजार पैदल थे। राणा ने घाट-घाट और नाके-नाके पर ऐसा बन्दोबस्त कर दिया कि पद-पद पर शत्रुओं का रास्ता रोका जाय और उनका खजाना और रसद लूट ली जाय।

२७ अक्टूबर को बादशाह ने तहव्वुरखाँ सेनापति को गांडल आदि परगने जब्त करने और हसनअली को राणा से लड़ने भेजा। हसनअली के पास सात हजार सेना थी। १ दिसम्बर को वह स्वयं भी उदयपुर की ओर चल दिया। उसके साथ योरोपियनों का तोपखाना भी था-बंगाल से शाहजादा मुअज्जम भी अपनी सेना सहित आ गया था। देबारी की घाटी में वहाँ के रक्षकों से बादशाह का युद्ध हुआ जिसमें राठौर गोरासिंह मारे गए और रावत मानसिंह घायल हुए। घाटी पर बादशाह का अधिकार हो गया। यहाँ से बादशाह ने राणा के पीछे पहाड़ों में हसनअलीखाँ को बड़ी सेना के साथ भेजा और शाहजादा मुअज्जम को खानेजहाँ सादुल्लाखाँ और इक्काताजखाँ के साथ उदयपुर भेजा। वहाँ सब जगह सुनसान था। इक्काताजखाँ और सादुल्ला ने महलों के आगे बने प्रसिद्ध (जगदीश-मन्दिर को तोड़ डाला। बीस माँचा तोड़ राजपूत तो वहाँ तैनात थे, वे एक-एक करके मारे गए। बादशाह ने भी उदयसागर पर के तीन मन्दिर ढहवाए। हसनअली ने राणा का पीछा करके उस पर हमला किया और बहुत-सी रसद और सामान लूटकर बीस ऊँटों पर लादकर बादशाह की सेवा में भेजा और एक सौ बहत्तर मन्दिर ढहाए। बादशाह ने खुश होकर उसे बहादुर आलमशाही का खिताब दिया। बादशाह ने चित्तौड़ के आसपास तिरेसठ मन्दिर गिरवाए और शाहजादा अकबर, हसनअलीखाँ, मुअज्जमखाँ रजीउद्दीनखाँ को चित्तौड़-रक्षा का भार दे अजमेर लौट आया। बादशाह के लौटते ही राजपूतों ने शाही थाने लूटने शुरू करदिए। जिससे मुगल-सेना की व्यवस्था बिगड़ गई और उनका आतंक उस पर छा गया। इसी बीच राणा ने बहुत-सी शाही रसद लूट ली और शाही थाने बर्बाद कर दिए। फलतः पहला आक्रमण निष्फल रहा।

इसके बाद बादशाहने दूसरी युद्धयोजना यह की कि शाहजादा आजम चित्तौड़ से देवारी और उदयपुर होता हुआ पहाड़ों में बढ़े और मुअज्जम राजनगर से तथा अकबर देसूरी से ! इस धावे में बादशाह ने चित्तौड़, पुर, मांडल, मांडलगढ़, बैराट, भैंसरोड़, मन्दसौर, नीमच, जोरन, ऊंटाला, कपासन, राजनगर और उदयपुर में अपना दखल कर थाने नियत किए । अकबर उदयपुर आया और श्री एकलिंग की ओर बढ़ा । रास्ते में नाकेनाके पर लड़ाइयां हुई । इनमें कोठारिए के रुक्मांगद के पुत्र उदयभान और अमरसिंह चौहान ने बड़ी वीरता दिखाई । उदयभान को वीरता के उपलक्ष में बारह गांव मिले । हसनअलीखां जो पहाड़ों में घुस गया था, परास्त होकर भागा । अब महाराणा ने कुंवर भीमसिंह को गुजरात पर भेजा । उसने ईडर का विध्वंस करके बडनगर को लूटा और चालीस हजार रुपए दण्ड लिए । फिर अहमदनगर जाकर दो लाख का माल लूटा । बादशाह ने मन्दिर गिराए थे, कुं० भीमसिंह ने तीन सौ के लगभग मस्जिदें ढहाई । उधर मन्त्री दयालदास ने मालवे पर धावा बोल दिया और नगर-नगर से दण्ड लिया तथा थाने बैठाए, मस्जिदें गिराई और कई ऊंट सोने से भरकर ले आया । उधर राठौर सांवलदास ने बदनौर पर भयानक आक्रमण किया जहां फौजदार रुहिल्लाखां बारह सौ सवारों सहित ठहरा था । वह इस आक्रमण से ऐसा घबड़ाया कि सारा सामान छोड़ रातोंरात भाग खड़ा हुआ । इसी भांति शक्तावत केसरीसिंह के पुत्र गंगदास ने पांच सौ सवारों के साथ चित्तौड़ के पास पड़ी छावनी पर छापा मारा और अठारह हाथी, दो घोड़े कई ऊंट छीनकर राणा की नजर किए । जिस पर राणा ने उसको कुंवर की पदवी, सोने के जेवर समेत उराम घोड़ा और गांव देकर सम्मा-

नित किया। इसी भाँति कुँवर गजसिंह ने बेगूँ पर आक्रमण कर वहाँ की शाही सेना को तहस-नहस कर डाला।

अब कुँवर जयसिंह ने तेरह हजार सवार और बीस हजार पैदल सेना लेकर जिसमें तीस के लगभग बड़े-बड़े सरदार थे, चित्तौड़ की ओर कूँच किया—जहाँ शाहजादा अकबर पचास हजार सेना लिए मुकीम था। जयसिंह ने रात को प्रबल आक्रमण किया और अकबर की सेना को तहस-नहस कर दिया। अकबर हारकर अजमेर को भाग गया। राजपूतों ने हाथी, घोड़े, तम्बू, निशान और नक्कारा छीन लिए। छावनी में आग लगा दी। यहाँ से भागकर अकबर ने नाडोल में मुकाम किया। वहाँ कुँवर भीमसिंह, राठौर गोपीनाथ और सोलंकी विक्रम ने बारह हजार सेना लेकर उसे घेर लिया, घोर युद्ध हुआ और उसका पूरा खजाना लूट लिया। इस प्रकार इस आक्रमण में भी बादशाह विफल हुआ और सुलह की बातें शुरू कीं। इतिहासकार कहते हैं कि इसी बीच राजसिंह की मृत्यु हो गई। राणा राजसिंह ने जितने बड़े-बड़े काम किए, उन सब में राजसमुद्र का निर्माण है, जिसके भीतर सोलह गाँवों की सीमा आई है। इस तालाब के बनवाने के विषय में इतिहासकार भाँति-भाँति की बातें कहते हैं। कोई कहते हैं कि विवाह के लिए जेसलमेर जाते वक्त नदी के वेग के कारण राजसिंह को दो-तीन दिन रुकना पड़ा था, इसलिए नदी को रोककर उसने तालाब बनवाने का विचार किया। किसी का मत है कि उसने एक पुरोहित, एक रानी, एक कुँवर और एक चारण को मरवा डाला था, जिसका किस्सा यों कहा जाता है कि कुँवर सरदारसिंह की माता ज्येष्ठ कुँवर सुलतानसिंह को मरवा कर अपने पुत्र सरदारसिंह को राज्य दिलाने का प्रपंच रच रही थी—उसने राणा को

कुँवर पर झूँठा शक दिलाया जिससे राणा ने सुलतानसिंह को मार डाला। फिर उसी रानी ने एक पुरोहित को पत्र लिखकर राणा को विष देने का षडयन्त्र रचा, पर भेद खुल गया और राणा ने पुरोहित और रानी दोनों को मरवा डाला। इस पर कुँवर सरदारसिंह स्वयं जहर खाकर मर गया। चारण उदयभानु ने राणा की निन्दा में कविता सुनाई। इससे क्रुद्ध हो उसे मरवा डाला। इन हत्याओं के निवारणार्थ उसने ब्राह्मण से उपाय पूछा और उन्होंने उसे विशाल तालाब बनवाने की सलाह दी। परन्तु कुछ लोगो का यह ख्याल है कि अकाल-पीड़ित लोगों को सहायता देने के विचार से यह तालाब बनाया गया। सन् १६६५ की १७ अप्रेल को पुरोहित गरीबदास के पुत्र रणछोड़राय के हाथ पंचरत्न के साथ नीव का पत्थर रखवाया गया, और सन् १६७१ की ३० जून को नाव का मुहुर्त किया गया। फिर सन् १६७४ में लाहौर, गुजरात और सूरत का बना हुआ जहाज डाला गया और सन् १६७६ की १४ वीं जनवरी को प्रतिष्ठा का कार्य शुरू हुआ। अष्टमी को राणा ने उपवास किया और देह-शुद्धि, प्रायश्चित आदि करके नवमी को अपने भाइयों, कुँवरों रानियों चाचियों, पुत्रवधुओं, कुटुम्बियों और पुरोहित गरीबदास सहित मण्डप में प्रवेश कर, देव-पूजन कर हवन किया। उस दिन राणा ने एक-भुक्त रहकर रात्रि जागरण किया। दूसरे दिन नंगे पैर पैदल सपरिवार परिक्रमा की। पांच दिन में चौदह कोस की परिक्रमा समाप्त कर पूर्णिमा को पूर्णाहुति दी और अपने पोते अमरसिंह को साथ बैठाकर स्वर्ण का तुलादान किया, इस तुला में बारह हजार तोले सोना चढ़ा। उसी दिन सप्तसागर दान किया। पटरानी सदाकुँवर ने चाँदी की तुला की। पुरोहित गरीबदास ने सोने की की। गरीबदास के पुत्र रणछोड़राय

राणा केसरीसिंह पारसोली वाले, टोडे के रायसिंह की माता और बारहट केसरीसिंह ने चाँदी की तुलाएँ कीं। इस उत्सव में राणा ने पुरोहित गरीबदास को बारह गाँव और अन्य ब्राह्मणों को गाँव, भूमि, सोना, चाँदी तथा सिरोपाव दिए। पण्डितों, चारणों, भाटों आदि को पाँच सौ बावन घोड़े, तेरह हाथी तथा सिरोपाव दिए। मुख्य शिल्पी को २५ हजार रुपए दिए। अन्य चारणों को भी घोड़े दिए। इस उत्सव के उपलक्ष में जोधपुर के राजा जसवन्तसिंह राठौर, आमेर के राजा रामसिंह कछवाहा, बूँदी के राव भावसिंह हाड़ा, बीकानेर के राजा अनूपसिंह, रामपुरा के चन्द्रावत महकमसिंह, जैसलमेर के रावल अमरसिंह, डूँगरपुर के रावल जसवन्तसिंह, रींवा के राजा भावसिंह को एक-एक हाथी, दो-दो घोड़े और जरदोजी सिरोपाव भेजे थे। उत्सव के दर्शनार्थ बाहर से छियालीस हजार ब्राह्मण और मंगते आए थे जो भोजन-वस्त्र से सन्तुष्ट किए गए। तालाब के बनवाने में एक करोड़ पचास लाख छियत्तर सौ आठ रुपए खर्च हुए थे। इसकी नौचौकी नामक बाँध पर ताकों में पच्चीस बड़ी-बड़ी शिलाओं पर पच्चीस सर्गों का राजप्रशस्ति महाकाव्य खुदा है जो भारतभर में सबसे बड़ा शिलालेख है। इसकी रचना तैलंग गुसाईं मधुसूदन के पुत्र रणछोड़ भट्ट ने की थी।

इस तालाब के अलावा महाराणा ने सर्व ऋतुविलास नामक एक महल अपने कुँवरपदे में बनवाया था जिसमें बावड़ी और बाग भी हैं। देवारी के घाटे का कोट और दर्वाजा तैयार कराया। उदयपुर में अम्बा माता का मन्दिर बनवाया, रंगसागर तालाब बनवाया जो पीछे पीछोले में मिला लिया गया। कांकरोली का द्वारकाधीश का मन्दिर और राजनगर कस्बा बसाया। एकलिंग के पास बाघेला इन्द्रसर के पुराने बाँध की जगह नया

बाँध बाँधा। राणा महादानी था। अपने जन्मदिन और दूसरे अवसरों पर वह तुलादान और बड़े-बड़े दान किया करता था। वह महावीर था। उसे कुम्भलगढ़ जाते हुए आड़ा गाँव में किसी ने भोजन में विष खिला दिया जिससे २२ अक्टूबर १६८० में सिर्फ ५१ वर्ष की उम्र मे उसका देहांत हो गया।

महाराणा की १८ रानियाँ थीं, जिनसे ६ पुत्र और १ पुत्री हुई। राणा रणपण्डित, साहसी, वीर, निर्भय, सच्चा क्षत्रिय, बुद्धिमान, धर्मनिष्ठ और दाता था। उसमें क्रोध की मात्रा अधिक थी। वह स्वय कवि और विद्वानों का सत्कार करने वाला था। किसी कवि ने राणा की प्रशंसा में श्लोक लिखा है—

संग्रामे भीम भीमो, विविध वितरणे यश्च कर्णोपमेवः।
सत्ये श्रीधर्म सूनुः, प्रवल रिपु जये पार्थ एवापरोयम्॥
श्रीमान्वाजीन्द्र शिक्षा नय विधि कुशलः शास्त्रतत्त्वेतिहासे।
देवोऽयं राजसिंहो जयतु चिरतरं पुत्रपौत्रैः समेतः ॥१॥

राजसिंह

पहिला अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—उदयपुर का एक प्रधान बाजार : समय—प्रातःकाल : दो नागरिक सड़क पर खड़े बातचीत कर रहे हैं। बाजार बन्दनवार और पताकाओं से सजा हुआ है।]

पहिला नागरिक—रत्नतुला ! सुना तुमने ?

दूसरा नागरिक—सुनने की एक ही कही। मैं इन्हीं आँखों से देखकर आ रहा हूँ।

पहिला नागरिक—सच। तो तुम श्री एकलिङ्ग गए थे ?

दूसरा— नहीं तो क्या, तुम्हें तो मालूम ही है, वहाँ मेरी साली का घर है। वहीं जो......

पहिला— (बात काटकर) तो तुमने महाराणा का रत्नतुला अपनी आँखों से देखा ?

दूसरा— अरे भाई ! कह तो दिया देखा–देखा। हमने ही नहीं, हजारों ने देखा, जिसने देखा दंग रह गया।

पहिला— दंग रह जाने की ही बात है भाई ! भला तुमने कहीं इतिहास-शास्त्र-पुराण में पढ़ा-सुना है, किसी राजा ने रत्नतुला किया है ?

[एक ब्राह्मण रामनामी ओढ़े आता है]

ब्राह्मण— शास्त्र-पुराण पढ़ने की बात कौन कह रहा है भाई !

पहिला— हम कह रहे हैं जी। हमने तुमने शास्त्र-पुराण में कहीं पढ़ा-सुना है ?

ब्राह्मण— अरे ! हमने शास्त्र-पुराण में नहीं पढ़ा तो क्या, तूने पढ़ा है ? मूर्ख, शास्त्र-पुराण पढ़ना क्या यों ही होता है।

पहिला— पढ़ा है तुमने ब्राह्मण देवता ?

ब्राह्मण— (लाल आँखें करके) नहीं पढ़ा है हमने ? दुष्ट, हमें मूर्ख समझता है।

[दो-चार और नागरिक आते हैं]

सब— क्या झमेला है जी ?

ब्राह्मण— यह शूद्र कहता है, हमने शास्त्र पुराण नहीं पढ़ा।

पहिला— हम क्षत्रिय हैं, शूद्र नहीं। हां, कहे देते हैं।

दूसरा— देवताजी, तुम नाहक बिगड़ने लगे। यह किसने कहा कि तुमने शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा।

ब्राह्मण— हूँहूँ, हमने शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा। अरे, १८ वर्ष काशी में हमने क्या भाड़ झोंका है। शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा। हूँहू !!

सब— अजी, झगड़ा क्या है ?

पहिला— रत्नतुला। रत्नतुला।

सब— कैसी रत्नतुला ?

पहिला— नहीं जानते, हमारे महाराणा राजसिंह ने श्री एक-लिङ्ग में जाकर रत्नतुला की है।

सब— हमारे महाराणा साक्षात् देवता के अवतार हैं। उनके शरीर में शिव का तेज है, वे जो करें सो थोड़ा।

पहिला— पर मैं कहता हूँ, किसी ने सुना है कि कलियुग में किसी राजा ने रत्नतुला दान की हो।

सब— नहीं सुना, नहीं सुना। स्वर्णतुला और चाँदी की तुला सुनी है। रत्नतुला नहीं सुनी।

पहिला— (आँखें तरेर कर ब्राह्मण से) तुमने सुना है कहीं ? कलियुग में......

ब्राह्मण— (कानों पर हाथ धरके) नारायण, नारायण, नहीं सुना।

पहिला— सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में।

ब्राह्मण— नहीं सुना भाई, नहीं सुना।

पहिला— कहीं पुराण-शास्त्र में देखा-पढ़ा है ?

ब्राह्मण— नहीं पढ़ा, नहीं देखा। रत्नतुला करके श्री महाराणा राजसिंह ने अपूर्व कृत्य किया है।

पहिला— यही तो हम कहते थे, तुम बिगड़े क्यों ?

ब्राह्मण— हम समझे, तुम हमें मूर्ख समझते हो, हम काशी में १८ वर्ष......

पहिला— भाड़ में जाँय तुम्हारे १८ वर्ष, तुमने हमें शूद्र कहा।

सब लोग—अरे भाई, जाने दो, जाने दो।

पहिला— नहीं कहो, हम शूद्र है ? (आस्तीन चढ़ाता है)

ब्राह्मण— नारायण, नारायण। अजी, तुम ठाकुर हो भैया! हम से भूल हुई।

सब लोग—हाँ जी, तो महाराणाजी का रत्नतुला तुमने देखा है ?

पहिला— देखा नहीं तो क्या ! कह तो रहे हैं। इन्हीं आँखों से देखा है। हीरा, मोती, मानिक और लालों के ढेर देखकर आँखें चौंधयाती थीं। बड़े-बड़े राजा-महाराजा सरदारों ने यह महायज्ञ देखा। देखते-देखते राणा के शरीर-बराबर रत्न तोल कर ब्राह्मणों और दरिद्रों में बाँट दिए गए।

सब— धन्य, धन्य ! वाह ! क्यों नहीं, राजसिंह-सा नरपति होना दुर्लभ है।

एक— 'होनहार विरवान के होत चीकने पात' आप लोग देखना महाराणा राजसिंह के हाथों बड़े-बड़े काम होंगे।

ब्राह्मण— हमने महाराणा की जन्मलग्न देखी है। महाराणा परम प्रतापी विजयी वीर हैं।

[नेपथ्य में गाजे-बाजे और बन्दूकों के छूटने का शब्द]

पहिला— लो भाई ! महाराणाजी की सवारी आ रही है। आओ, हम भी दर्शन कर लें।

[राणाजी घोड़े पर सवार सब सरदारों सहित आते हैं]

सब लोग—(हर्ष से) जय, महाराणा राजसिंह की जय। हिन्दूपति हिन्दूसूर्य राणाजी की जय। श्री एकलिङ्ग के दीवान की जय।

[पर्दा बदलता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—चित्तौड़ का किला : मैदान में महाराणा राजसिंहजी अपने सरदारों सहित खड़े बातें कर रहे हैं।]

महाराणा—तो यह खबर बिलकुल सच है ?

रावत रघुनाथसिंह—(हाथ जोड़कर) पृथ्वीनाथ ! सेवक को विश्वस्त सूत्र से खबर मिली है......

महाराणा—कि समू नगर की लड़ाई में मुराद और और औरंगजेब की सम्मिलित सैन्य ने दारा को परास्त कर दिया।

रावत रघुनाथसिंह—जी हाँ, महाराज ! और इसके बाद औरंगजेब ने कौशल से मुराद को कैद करके सलीमगढ़ में भेज दिया है और बूढ़े बादशाह को आगरे के किले कैद कर लिया है।

महाराणा—दारा अब कहाँ है ?

रावत रघुनाथसिंह—वह पहिले पंजाब भाग गया था। पर औरंगजेब ने ताबड़-तोड़ उसका पीछा किया। अब

वह कच्छ गुजरात होता हुआ सिरोही में मुकीम है। वहाँ से उसने अन्नदाता के नाम एक खरीता भेजा है।

महाराणा—खरीते में क्या लिखा है ?

दीवान फतहचन्द—वह लिखता है कि हमने राजपूतों पर अपनी लाज छोड़ी है और हम सब राजपूतों के मेहमान होकर आए हैं। आप सब राजपूतों के सरदार हैं। इसलिए आपसे आशा है कि आला हजरत को कैद से छुड़ाने में हमारी मदद करेंगे।

महाराणा—(ठण्डी साँस लेकर) अभागा दारा ! औरंगजेब की क्या खबर है ?

दीवान फतहचंद—दारा के पीछे पंजाब जाते वक्त उसने एक निशान भेजकर श्रीमानों का पद बढ़ाकर ६ हजारी जात व ६ हजार सवार कर दिया है। साथ में ५ लाख रुपए तथा एक हाथी और हथिनी भेजी है, और फर्मान भेजा है कि बदनौर, माण्डलगढ़ और बाँसवाड़ा दखल करलें और पाटवी कुँवर को शाही खिदमत में भेज दें।

राणा— (मुस्करा कर) देखा जायगा। क्या मोहकमसिंह माण्डल से अभी नहीं लौटा ?

रावत मेघसिंह—लौट आया है अन्नदाता ! माण्डलगढ़ को बादशाह शाहजहाँ ने रूपनगर के राजा रूपसिंह को दे

दिया था। उसकी तरफ से महाजन राघवदास वहाँ का किलेदार तैनात है। मोहकमसिंह ने उसे बहुत समझाया, पर वह लड़ने-मरने को तैयार है, गढ़ नहीं देता।

राणा— (भौंहों में बल डालकर) बनेड़ा और शाहपुरा वालों से तो मामला तै होगया न?

रावत मेघसिंह—जी हाँ, अन्नदाता! उन्होंने २६ हजार रुपए और शाहपुरा वालों ने २२ हजार रुपए दंड देकर आधीनता स्वीकार कर ली है। जहाजपुर, सावर, केकड़ी और फूलिया के ठिकाने भी आधीन हो गए हैं।

राणा— बहुत खूब, मालपुरे और टोडे का समाचार कैसा है?

रावत मेघसिंह—मोहकमसिंह शक्तावत ने मालपुरे को ६ दिन तक लूटा और भारी खजाना हुजूर में हाजिर किया है। रायसिंह की माता ने ६० हजार रु० देकर आधीनता स्वीकार करली है, वीरमदेव के नगर को उसने जलाकर खाक कर दिया है।

राणा— उसकी सरकशी अब सही न जाती थी, आशा है वह सीधा हो जाएगा। हाँ टोंक, लालसोट और साम्भर?

रावत मेघसिंह—सोलंकी दलपत ने इन ठिकानों को परास्त कर सबसे दण्ड उगाहा है, वह शीघ्र श्रीमानों की सेवा में हाजिर होकर कैफियत निवेदन करेगा।

राणा— डूंगरपुर ठिकाने से सरकशी की थी न?

रावत मेघसिंह—घणीखम्मा, अन्नदाता के प्रताप से रावल समरसिंह का मिजाज अब ठिकाने लग गया है, उसने १ लाख रुपया, १० गाँव, देशदाण और १ हाथी, १ हथिनी नजर कर आधीनता स्वीकार की है।

राणा— शरणागत को अभय। उसे १० गाँव, देशदाण और २० हजार रुपए छोड़ दिए जाएँ। आज ही हमारी ओर से तसल्ली का फर्मान रावलजी को भेज दिया जाय।

रावत मेघसिंह—जो आज्ञा दरबार।

राणा— देवलिए का मामला कैसे तय होगा?

दीवान फतहचन्द—यह सेवक देवलिए पर गया था। रावत हरीसिंह भागकर बादशाह के पास चले गए हैं। पर उनकी माता ने अपने पोते प्रतापसिंह को सेवा में भेज दिया है। साथ में ५ हजार रु० और एक हथिनी दण्ड में दी है। आगरे में सहायता का कोई रंग-ढंग न देखकर रावत हरीसिंह, रावत रघुनाथ सिंह की मारफत शरण में आने की विनती करते हैं।

राणा— (गम्भीरता से) इस मामले पर पीछे मसलहत होगी। अभी हमें बहुत-कुछ करना बाकी है। जिन-जिन ठिकानेदारों ने वज़ीर सादुल्ला के साथ मिलकर चित्तौड़ की मरम्मत ढहाने में सहयोग दिया था, उन सबको दण्ड मिल गया। पर चित्तौड़ की मरम्मत

का गिराया जाना मेरी आँखों में शूल-सा चुभ रहा है। (बेचैनी से घूमता है, फिर ठहरकर) परन्तु यही समय है।

दीवान फतहचन्द—श्री महाराज की क्या इच्छा है?

राणा— दिल्ली का मुगल तख्त डगमगा रहा है। आओ, सुयोग पाकर राजपूताने की नींव दृढ़ करलें। आप लोगों की सहायता से हमने गत १०० वर्षों से खोए हुए इलाके अपने राज्य-काल के प्रारम्भ ही में हस्तगत कर लिए हैं। अब हमें अजेय चित्तौड़ की मरम्मत करनी है और अपने बाकी इलाके आधीन करने हैं। इसके बाद समस्त राजपूत-शक्ति को जाग्रत करके उसे हम एकीभूत करेंगे। यह सब श्री एकलिंग भगवान की कृपा से अवश्य होगा।

रावत मेघसिंह—(हाथ जोड़कर) पृथ्वीनाथ! आलमगीर के खरीते का क्या होगा?

राणा— आलमगीर कौन?

रावत मेघसिंह—औरंगजेब ने बादशाह होकर अपना नाम आलमगीर पीर दस्तगीर रखा है।

राणा— (हँसकर) ओह, समझा। कुंवर सुल्तानसिंह को काका अमरसिंह के साथ भेंट भलाई देकर दिल्ली भेज दिया जायगा। वे बादशाह आलमगीर को तख्तनशीनी और विजय की बधाई दे आएँगे। (कुछ

रावत रघुनाथसिंह—किस लिए नहीं कर सकते ? क्या प्राण रहते हम अन्याय सहन करेंगे ? क्या हमारे शरीर में बाप्पा रावल का रक्त नहीं है ? क्या हमारी तलवार मोथरी हो गई है ? हमारी कलाई में क्या उसे पकड़ने की शक्ति नहीं रही ?

रत्नसिंह—यह सबकुछ अभी है, परन्तु शत्रु के लिए। स्वामी के लिए नहीं। ठिकाना स्वामी ने दिया है, वह ले भी सकता है।

रावत रघुनाथसिंह—स्वामी ने क्या भीख में दिया है। इतिहास में क्या आग के अक्षरों में सत्यव्रती चूड़ाजी के त्याग की कथा नहीं लिखी है ? यदि हमारे पूर्वज चूड़ाजी इच्छा से गद्दी का त्याग न करते तो आज राणा के पद पर मेरा अधिकार था। परन्तु, हमारे वंश का इतना ही त्याग नहीं है। उसने सदैव सर्व-प्रथम सिर कटाकर मेवाड़ की रक्षा की है। उसका आज यह बदला कि हमारा ठिकाना छीना जाता है—हमारी सेवाओं का यह पुरस्कार ?

रत्नसिंह—पिताजी ! हमारे पूर्वजों ने मेवाड़ के लिए जब ऐसे-ऐसे बड़े त्याग किए, तब क्या हम इतना त्याग भी न कर सकेंगे ?

रावत रघुनाथसिंह—त्याग ? इसे तुम त्याग कहते हो—यह अन्याय है। इसे हम सहन नहीं करेंगे। जब तक

मेरे हाथ में तलवार और शरीर में प्राण हैं, सलूम्बर की सीमा पर किसकी सामर्थ्य है जो दृष्टि करे । मैं रक्त की नदी वहा दूँगा । मेवाड़ के सभी सरदार राणा के इस अन्याय के विरोधी हैं।

रत्नसिंह—यह सच है। परन्तु यह समय गृहकलह का नहीं। राणाजी के कान शत्रुओं ने भर दिए हैं। उनके विचार शीघ्र ही पलट जाएँगे।

रावत रघुनाथसिंह—तो तुम चाहते हो कि ठिकाना पारसौली वालों को सौंप दिया जाय।

रत्नसिंह—महाराणा की आज्ञा का पालन होना चाहिए।

रावत रघुनाथसिंह—परन्तु मै आज्ञा-पालन नहीं करूँगा।

रत्नसिंह—तो राणा की सेना बलपूर्वक ठिकाने को खाली करने आएगी।

रावत रघुनाथसिंह—मैं उससे युद्ध करूँगा।

रत्नसिंह—उसमें आपकी पराजय होगी।

रावत रघुनाथसिंह—जो हो, सो हो।

रत्नसिंह—व्यर्थ रक्तपात होगा।

रावत रघुनाथसिंह—मैं उसका जिम्मेदार नहीं।

रत्नसिंह—गृहकलह में राज्य की शक्ति क्षीण होगी।

रावत रघुनाथसिंह—उसका फल राणा भोगेंगे।

रत्नसिंह—नहीं, उसका फल मेवाड़ को भोगना होगा। पिताजी, मैं ऐसा नहीं होने दूँगा।

रावत रघुनाथसिंह—तुम क्या करोगे ?

रत्नसिंह—मैं आपको युद्ध न करने दूँगा ।

रावत रघुनाथसिंह—पर मैं युद्ध करूँगा ।

रत्नसिंह—तब मैं राणाजी की ओर से आप से लड़ूँगा ।

रावत रघुनाथसिंह—तुम मुझसे लड़ोगे ? तुम ? मेरे पुत्र ? राजपूताने में किसी ने सुना है, बेटा बाप से लड़े ?

रत्नसिंह—अब लोग सुन लेंगे ।

रावत रघुनाथसिंह—यही तुम्हारी पितृभक्ति है ।

रत्नसिंह—जी हाँ, पिताजी ! आपके सम्मान की रक्षा के लिए मैं आपसे लड़ूँगा ।

रावत रघुनाथसिंह—मेरे सम्मान की रक्षा के लिए ?

रत्नसिंह—जी हाँ, उससे मेवाड़ के सरदार युद्ध से विरत रहेंगे और यह रक्तपात टल जाएगा ।

रावत रघुनाथसिंह—अच्छा, मैं युद्ध नहीं करूँगा ।

रत्नसिंह—पिताजी ऐसा ही होना चाहिए ।

रावत रघुनाथसिंह—ऐसा ही होगा । परन्तु मैं मेवाड़ का त्याग करूँगा । इस अन्यायी राज्य में मैं एक क्षण भी नहीं रहूँगा ।

रत्नसिंह— पिताजी, सब बात सोच लीजिए ।

रावत रघुनाथसिंह—तुम्हारे जैसे आज्ञाकारी पुत्र ही जब पिता के विरोधी हैं, तब और क्या सोचना है । मैं इस राज्य में न रह सकूँगा ।

राजा— राणा का इतना साहस ? माण्डलगढ़ हमें शाही जागीर में मिला है। मैं इसे सहन नहीं कर सकूंगा। राघवदास ने इतनी जल्दी किला दे दिया ? किला काफी दृढ़ था। राघवदास ने दगा तो नहीं की।

दीवान— नहीं महाराज ! उसने एक मास तक जमकर युद्ध किया और जब तक किले में रसद और सेना रही, उसने मोर्चा लिया। महाराणा राजसिंह ने स्वयं किले पर आक्रमण किया था।

राजा— राणा राजसिंह के पर निकले हैं। एकलिङ्ग पर रत्न-तुला करके उसका गर्व बढ़ गया है। पर मैं उसके गर्व को भंजन न करूँ तो मेरा नाम रूपसिंह नहीं। हमें बादशाह के पास अर्जी भेजनी चाहिए।

दीवान— जैसी आज्ञा, पर सेवक का ख्याल है कि अर्जी भेजने से कुछ लाभ न होगा। नया बादशाह अपने ही बहुत से झंझटों में फंसा है। अभी उसका पैर डगमगा रहा है। फिर मुझे विश्वस्त सूत्र से पता लगा है कि नए बादशाह आलमगीर ने महाराणा को ये परगने दखल करने को शाही फर्मान दे दिया था। महाराज, वास्तव में ये परगने राणा के ही तो थे !

राजा— परन्तु जो परगने शाही खिदमत के बदले हमें मिले हैं, उनका इस प्रकार हमारे हाथ से निकल जाना

हमारे लिए बड़ी ही लज्जा की बात है। मै राणा से युद्ध करूँगा।

मन्त्री— (हाथ जोड़कर) महाराज की जो मर्जी हुई, सो ठीक है। परन्तु सेवक का निवेदन यह है कि युद्ध और सन्धि अपना और शत्रु का बलाबल देखकर ही करना बुद्धिमानी है। राजसिंह की शक्ति प्रबल है और हम उससे पार नहीं पा सकते।

राजा— परन्तु हमारी पीठ पर शाही हाथ है। माण्डलगढ़ को हमसे छीन लेना हमारा नहीं, बादशाह का अपमान है। बादशाह के पास यह सारी हकीकत लिखकर, किसी सुयोग्य आदमी को भेज देना चाहिए।

मन्त्री— जो आज्ञा महाराज! मेरी सम्मति में महाजन राघवदास ही को इस कार्य के लिए भेजना ठीक होगा। वह बादशाह से सब ऊँच-नीच निवेदन कर आएगा। फिर जैसा अवसर होगा, देखा जायगा।

राजा— अच्छा, अभी यही रहे। पीछे हम स्वयं युद्ध करेंगे।

मन्त्री— तो मैं राघवदास को दिल्ली भेजने का प्रबन्ध करता हूँ।

राजा— हाँ, कीजिए।

[मन्त्री जाता है]

[पर्दा बदलता है]

पांचवां दृश्य

[स्थान—मेवाड़ का एक गांव : दो-तीन किसान बैठे आग ताप रहे हैं और तमाखू पी रहे हैं]

पहिला— सुना भाई तुमने ! राणाजी गोमती नदी के वेग को रोककर एक बड़ा भारी ताल बना रहे हैं। उसमें सोलह गांवों की सीमा आएगी।

दूसरा— गांवों का क्या होगा ?

तीसरा— हमारी धरती भी यदि ताल में गई तो हम खाएंगे क्या ?

पहिला— उसका बन्दोबस्त तो राणाजी करेंगे। राणाजी क्या हमारी जमीन यों ही छीन लेंगे ?

दूसरा— छीन कैसे लेंगे। बदले में जमीन मिलेगी, हमने सुना है।

तीसरा— खाक सुना है तुमने। रुपये, मिलेंगे रुपये, समझे !

पहिला— और यदि कोई अपनी धरती न दे तो ?

दूसरा— न कैसे दे ? राजा मांगे और न दे, यह भी कहीं हो सकता है ?

तीसरा— इस ताल से हमारा ही तो लाभ है !

दूसरा— हमारा क्या लाभ है ?

तीसरा— अरे, ताल बनेगा तो हमारी धरती को पानी की कोई दिक्कत ही न रहेगी।

पहिला— वाह रे मूर्ख ! धरती जब पानी में डूब जाएगी तब

पानी की जरूरत रही तो क्या–और न रही तो क्या ?

दूसरा— धरती डूबे चाहे न डूबे। हमें क्या ? राणा धरती मांगेंगे तो हमें देना ही होगा–भाई !

तीसरा— ऐसा नहीं है जी ! राणाजी प्रजा की भलाई के लिए ही ताल बना रहे हैं।

पहिला— सुना है, राणाजी रूपनारायण के दर्शन को जल्द ही इधर आएंगे और तब ताल का मुहूर्त होगा।

दूसरा— सुनो भाई, राणा राजसिंह राजपूताने में एकछत्र नरपति हैं।

तीसरा— क्यों नहीं ! ऐसा धीर, वीर, दानी और चतुर राणा मेवाड़ के भाग्य ही से उसे मिला है।

चौथा— तुमने सुना है ? राणाजी की शरण में दूर-दूर से बादशाह के सताए हुए ब्राह्मण, यती, विद्वान् और शूरमा आ रहे हैं। राणा सबका यथा-यत् सम्मान् करते हैं।

पहिला— धन्य राणाजी ! धन्य मेवाड़ ! राणा राजसिंह से मेवाड़ के भाग्य जाग गए।

दूसरा— परन्तु भाई, एक दिन बादशाह से गहरी छनेगी।

पहिला— तो मेवाड़ तो अपनी आन निबाहेगा।

तीसरा— इस बार हम भी तलवार पकड़ेंगे, देखना वह बढ़-बढ़ कर हाथ मारूं कि जिसका नाम......

[दो बालक आते हैं]

एक— काकाजी, हम राणा की फौज में अपनी भर्ती कराएंगे।

दूसरा— और हम भी। मैंने और करनसिंह ने तलवार के वे-वे हाथ राणाजी को दिखाए कि उन्होंने प्रसन्न होकर हमें यह सोने का कड़ा दिया।

एक किसान—शाबास पुत्र ! राजपूतों का सच्चा गहना तो तलवार ही है। हल-बैल तो ठाली बैठा रुजगार है।

एक नवयुवक—काकाजी, क्षत्रिय के लिए यही धर्म है। आज गुरुजी बता रहे थे।

दूसरा किसान—ठीक कहते हो। जाओ ! अब सो रहो (साथी से) ऐसा प्रतीत हो रहा है कि सोया हुआ मेवाड़ जाग रहा है।

दोनों युवक—हाँ, काकाजी ! हमने पाठशाला में एक गीत सीखा है। उदयपुर में सब लड़के यह गीत गाते टोली बाँध कर निकलते हैं। आप सुनेंगे काकाजी !

किसान—सुनाओ बेटे, सुनूँगा।

[दोनों बालक गाते हैं]

अभय रहो मेवाड़।
अरावली के दिव्याञ्चल में,
वन-घाटी दुर्गम पथ पूरित—
नभमण्डल के नीचे निर्भय—

मुदित रहो मेवाड़।
अभय रहो मेवाड़।
हल्दीघाटी के तरु पल्लव,
वीरवरों को अमर कीर्ति का—
मधुर राग गाते झुक-झुक कर
विजय रहो मेवाड़।
अभय रहो मेवाड़।

[गाते हुए जाते

[पर्दा बदलता है]

छठा दृश्य

[स्थान—उदयपुर का सर्व-ऋतुविलास महल : राणा राजसिंह
महारानी कृष्णकुँवर। समय—सन्ध्याकाल]

रानी— स्वामी, क्या यह सच है कि सलूम्बरा सरदार
रघुनाथसिंह ने मेवाड़ त्याग दिया ?

राणा— सच है ! वे अपना धर्म छोड़कर बादशाह के
दिल्ली चले गए हैं।

रानी— रावत रघुनाथसिंह जैसे चतुर राजनीतिज्ञ
मेवाड़ में कम हैं ! महाराज, उनके साथ
हुआ है। सलूम्बरा का ठिकाना उनके
दादों के रक्त का माल है। आपने वह चौहा

दे दिया ?

राणा— मैं वीर की पूजा करूँगा। पारसौली का केसरसिंह वीर सरदार है।

रानी— तो आप उन्हें उदयपुर की गद्दी दे सकते थे। अपने सरदार का मान-भंजन वीर-पूजा नहीं। रघुनाथ-सिंह जो प्रकृत वीर हैं।

राणा— मुझे मालूम हुआ था कि वह मुझसे द्वेष करता है।

रानी— यह असत्य है—वह राज्य का सच्चा सेवक है।

राणा— उसका बादशाह की सेवा में जाना ही उसे अपराधी प्रमाणित करता है। सुना है, वह बादशाह के कान भरकर उसे मेरे विरुद्ध उभार रहा है।

रानी— महाराज, दुष्टों ने आपके कान भर आपको सरदार के विरुद्ध उभाड़ा है। महाराज को चूंडा और उसके वंशजों का उपकार यों न भूलना चाहिए था। गद्दी उनकी थी, यह तो आप जानते हैं।

राणा— परन्तु राणा होने पर तो मुझे आँखें खोलकर ही रहना चाहिए।

रानी— हाँ स्वामी, यह मेरी इच्छा है। मैंने सरदार के पुत्र रत्नसिंह को बुलाया है।

राणा— किस लिए महारानी।

रानी— इसीलिए कि उसे बता दिया जाय कि सलूम्बरा का ठिकाना उन्हीं का है। आप उसे विश्वास दिलादें

दासी— घड़ी खम्मा अन्नदाता, रावल रत्नसिंहजी ड्योढ़ियों पर हाजिर हैं।

रानी— उन्हें यहीं ले आओ। (राणाजी से) रत्नसिंह को मैं जयसिंह से किसी भाँति कम नहीं समझती। वह बड़ा विजयी, वीर और सुशील है।

[रत्नसिंह आता है]

रत्नसिंह—अन्नदाता की जय हो। सेवक को क्या आज्ञा है?

रानी— तुमने सलूम्बरा का ठिकाना क्या राव केसरसिंह को सौंप दिया?

रत्नसिंह— अभी नहीं रानी जी।

रानी— क्यों? दरबार ने तो उसका पट्टा उनके नाम कर दिया है। इसमें विलम्ब क्यों?

रत्नसिंह— घणी खम्मा, रानी मा, राजाज्ञा पालने में मेरी ओर से देर नहीं हुई। मैं स्वयं राव केसरीसिंहजी के पास यह कहने गया था कि वे ठिकाना दखल करलें।

रानी— रावजी ने क्या कहा?

रत्नसिंह— उन्होंने कहा, सलूम्बरा ठिकाना चूड़ावतों का है, चूड़ावत मेवाड़ की गद्दी के रक्षक और प्रतिपालक हैं। उनके ठिकाने पर मैं अधिकार नहीं कर सकता।

राणा— क्या रावजी ने यह कहा?

रत्नसिंह—जी हाँ, सरकार। मैंने बहुत समझाया, परन्तु वे ठिकाना दखल ही नहीं करते।

रानी— सुना महाराज, अपने सेवकों के विचार।

राणा— सुना ! (आगे बढ़कर रत्नसिंह को छाती से लगाकर) वीरवर तू धन्य है। सलूम्बर ठिकाना तुम्हारा है। मैं रावत रघुनाथसिंह को लाने को दूत भेजूँगा।

रत्नसिंह—(राणा के चरण छूकर) दर्बार ! यह तलवार, यह प्राण, यह शरीर सब स्वदेश पर न्यौछावर हैं।

राणा-रानी—धन्य वीर, धन्य रत्नसिंह !

[पर्दा बदलता है]

सातवां दृश्य

[स्थान-दिल्ली : लाल किले का भीतरी भाग : इबादतगाह का कमरा : बादशाह अकेला घूम रहा है। समय—प्रातः]

बादशाह— (स्वगत) आज उस खौफनाक वक्त को ६ साल गुजर गए। जब समूगढ़ के मैदान में दारा की फौज के मैंने धुर्रे उड़ा दिए थे। बदनसीब दारा, अपने सामने किसी को न लगने देता था, आखिर कुत्ते की मौत मारा गया। आज भी खौफनाक आँखें नहीं भूलतीं-जब उसका सिर काटकर मेरे सामने पेश किया गया था। पहिले मुझे यकीन ही न हुआ कि यह दारा का सिर है। मगर फिर मैंने पहिचाना–वह दारा था--वही, जो

कम्बख्तों के दिल में खौफ की तो जगह ही नहीं है। इनके लिए मरना और मारना महज खेल है। (कुछ सोचकर) पहरे पर कौन है ?

[एक खोजा आता है]

बादशाह— वजीर असदुल्ला को अभी हाजिर कर।

ख़ोजा— (कोर्निश करके) जो हुक्म खुदावन्द !

[जाता है]

बादशाह— (दोनों हाथों से मुट्ठी मलता हुआ) यह तो सच है कि आला हजरत ने और जन्नत नशीन बादशाह जहांगीर ने हिन्दुओं से मिलकर—राजपूतों की मदद से हिन्दुस्तान पर हुकूमत की थी, मगर आज वक्त बदल गया है। हिन्दुस्तान के इस सिरे से उस सिरे तक दीने-इस्लाम का सितारा बुलन्द है। मैं चाहता हूँ कि मुल्क में दीन की इज्जत बढ़ाई जावे।

[वजीर असदुल्ला आते हैं]

बादशाह— जोधपुर की रानी गिरफ्तार हुई ?

वजीर— हुजूर, वह कुछ राजपूतों के साथ बचकर भाग गई। बाकी आदमी काट डाले गए। औरतें जल मरीं।

बादशाह— कौन उसे गिरफ्तार करने गया था ?

वजीर— फौजदार तहव्वरखाँ गए थे, जहाँपनाह !

बादशाह— और उनके साथ कितनी फौज थी ?

वजीर— पाँच हजार, खुदावन्द !

बादशाह— राजपूत कितने थे ?

वजीर— ठीक अर्ज नहीं कर सकता। कोई कहते हैं, दो-सौ थे, कोई कहते हैं, पचास थे।

बादशाह— (गुस्से से) और उन्हें लेकर रानी ५ हजार शाही फौज को कुचल कर चली गई।

वजीर— जहाँपनाह, देखने वाले कहते हैं कि ऐसा नजा कभी न देखा था। जब रानी बच्चे को पीठ पर बाँध दोनों हाथों से तलवार घुमाती शाही फौज को चीरती हुई चली गई। हुजूर! लोग सक्ते की हा में आ गए।

बादशाह— शर्म की बात है! जसवन्त का लड़का गिरफ हुआ ?

वजीर— जी हाँ, खुदावन्द!

बादशाह— उसे इसी जुम्मे को मुसलमान कर लिया जाय उसका नाम मुहम्मदीराज रखा जाय। उसे इस तालीम देने की तमाम जरूरी कार्यवाहियाँ जाँए।

वजीर— जो हुक्म जहाँपनाह!

बादशाह— रानी कहाँ गई है, कुछ पता लगा ?

वजीर— वह उदयपुर के राना राजसिंह की पनाह में

बादशाह— (त्योरियों में बल डालकर) राजा राजसिंह और भी शिकायतें हैं ?

वजीर— जहांपनाह, खबर मिली है कि उसने वे तमाम इलाके दखल कर लिए हैं जो आला हजरत ने दखल कर लिए थे और चित्तौड़ के किले की मरम्मत जो शाही सुलहनामे के खिलाफ होने से गिरा दी गई थी फिर से करली गई है।

बादशाह— (सोचकर) बहतर ! इस मसले पर फिर गौर किया जायगा। क्या मुल्ला और उल्मा आए हैं :

वजीर— जी हां खुदावन्द ! वे सब कदमबोसी के लिए मुन्तजिर खड़े हैं।

बादशाह— उन्हें यहां भेज दो और जसवन्तसिंह के इस लड़के का खूब ख्याल रखो।

वजीर— जो हुक्म।

[वजीर जाता है]

[सब लोग आते हैं]

बादशाह— आइए मौलाना ! ऐ सच्चे दीनदारो, रसूले पाक ने इस नाचीज को काफिरों के इस मुल्क का बादशाह बनाया। सो इसलिए कि दीने इस्लाम का झंडा हिन्दुस्तान में बुलन्द रहे। अब मेरे सच्चे दोस्तो आप बताइए कि कैसे यह सवाब का काम अंजाम दिया जा सकता है ?

एक मुल्ला—जहांपनाह ! खुदा का शुक्र है कि हुजूर के खयालात दीने इस्लाम की हिफाजत और बहबूदी की ओर

हैं। इस सवाव के वदले गुदा आपको जन्नत न दे तो मैं जामिन हूँ।

वादशाह— मैं चाहता हूँ कि तमाम मुल्क में दीने इस्लाम की रोशनी फैलाने के लिए वुतपरस्ती का खात्मा कर दिया जाय। इसलिए हमने तमाम सल्तनत में हुक्म जारी किए हैं कि जहाँ जो पुराना मन्दिर हो तोड़ डाला जाय और उस जगह पाक मस्जिद वना दी जाय।

दूसरा मुल्ला—वल्लाह! क्या सवाव का काम किया है हुजूर ने।

तीसरा— जहाँपनाह सचमुच औलिया हैं।

वादशाह— मैं एक अदना दीन का खादिम हूँ। हाँ, तो इस हुक्म की तामील सख्ती से हो रही है और उसे और मुस्तैदी से अमल में लाने के लिए मैंने एक महकमा ही कायम कर दिया है।

सब— सुभान अल्लाह! सुभान अल्लाह!! जहाँपनाह ने वहुत ही मुनासिव काम किया है।

वादशाह— मैंने तमाम काफिर राजपूतों और हिन्दुओं को जिम्मेदार जगहों से हटाकर, उनकी जगह दीनदारों को दी हैं।

सब— ऐसा ही होना चाहिए।

वादशाह— अब आप लोग कहिए कि दीने इस्लाम की वहतरी के लिए और क्या किया जा सकता है?

एक मुल्ला–हुजूर, शरअ की मन्शा है कि तमाम हिन्दुओं पर जजिया लगाया जाय, जैसा कि पठान बादशाहों ने हिन्दुओं पर लगाया था। इससे दीन की तरक्की होगी और खजाना भी बढ़ेगा।

बादशाह— इस मसले पर भी गौर किया जा रहा है। मगर हमें खयाल है कि राजपूत और हिन्दू रईस इससे बिगड़ जाएँगे।

मुल्ला— मगर जहांपनाह, जो बस खुदा से खौफ खाते हैं, इन मक्कार राजपूतों से डर जाने वाले नहीं हैं, जजिया का हुक्म तो जरूरी जारी होना चाहिए।

बादशाह—बहतर, मैं जल्द जजिया का हुक्म जारी करूँगा। अब आप लोग जा सकते हैं।

सब मुल्ला–शुक्रिया! अब हमने समझा कि जहांपनाह औलिया हैं। हम खुदा से दुआ करते हैं कि जहांपनाह के कदम तख्ते मुगलिया पर दीने इस्लाम के लिए मुबारक हों।

[जाते हैं]

बादशाह— सल्तनत एक बोझा है और बादशाह उसे ढोने वाला गधा। ये दीन के अंधे मुल्ला सबसे ज्यादा खतरनाक हैं। मगर इनसे ज्यादा वे मगरूर राजपूत हैं—जो हर तरह बर्बाद होने पर भी अपनी अकड़ छोड़ना नहीं जानते। उदयपुर का राजा एक अंगारा है। मगर

जोधपुर के राठौर उससे मिल गए तो सल्त
लिए खतरनाक तूफान खड़ा करेंगे। एक बा
मेर की ज्यारत के बहाने इनको देखना होग

[बड़बड़ाता हुआ

आठवाँ दृश्य

[स्थान—रूपनगर का अन्तःपुर : कुछ सहेलियाँ बाग में
और गा रही हैं। सावन की बहार है। समय—प्रातःक

राग-झिंझोटी

सखि झूलो और झुलाओ।
शीतल पवन चलत पुरवैया।
झुक झूमत तरु डार-पात—
झरत-झरत रिमझिम-रिमझिम
सखि रोम-रोम हर्षाओ ॥१॥ सखि
क्षण में धूप क्षणेक में बादल।
क्षण में बिजली क्षण में रिमझिम।
ऋतु मनमोहन पावस आई
मन उमग उमगाओ ॥२॥ सखि
हँस-हँस पैंग बढ़ाओ सजनी।
गाओ राग, जगाओ सजनी।

प्रेम-ज्योति के जगमग दीपक ।
उर में आज जलाओ ॥३॥ सखि भूलो०

[परस्पर बातें करती हैं]

एक— सुनोरी सखिओ ! आओ, आज हम राजकुमारी को खूब छकाएँ ।

दूसरी— क्या करेगी री तू ?

पहिली— मैं कहूँगी कि राजकुमारी को ब्याह की फिक्र हो रही है ।

तीसरी— खूब मजा रहेगा । फिर हम पूछेंगी—उन्हें कौनसा दूल्हा पसन्द है ।

पहिली— उनका दूल्हा मेरे मन में है, पर बताऊँगी नहीं ।

दूसरी— बता दे सखि !

पहिली— नहीं बताऊँगी । हम सब जनी मिलकर उन्हीं से पूछेंगी । उन्हें खूब तंग करेंगी ।

दूसरी— खूब दिल्लगी रहेगी । सुन—(कान में कुछ कहकर) क्यों ? है न यही बात ।

पहिली— दूर हो पगली, ऐसा भी कहीं हो सकता है ! चुप, वह दासी आ रही है ।

[दासी आती है]

दासी— एक बुढ़िया राजकुमारी से मिलने की बड़ी देर से हठ ठान रही है । मैंने बहुत कहा, आज कुमारीजी व्रत कर रही हैं । मुलाकात नहीं होगी । पर

सुनती ही नहीं। (हँसकर) उसने मुझे घूँस में सुर्मे की शीशी दी है।

एक सहेली—क्या करामात है, इस सुर्मे में? देखूँ......

दूसरी— इसे आँख में लगाने से एक के दो दीखते हैं।

तीसरी— तब तो बहुत अच्छा है, एक शीशी मैं भी लूँगी

दासी— उस बुढ़िया को क्या कहदूँ?

पहिली— यह तो कह, वह है कौन?

दासी— मुसलमानी है? दिल्ली से आई है, मिस्सी, ᠁ और तस्वीरें बेचती है। कहती है, राजकुमार᠁ लिए तस्वीरें लाई हूँ?

पहिली— अरी, उसका रंग-रूप कैसा है?

दासी— मुँह में एक दाँत नहीं, चहरे पर लकीरें ही लक᠁ आँखों में सुरमा और मुँह में पान।

पहिली— अरे वाह, उसके यह ठाठ। यहाँ भेजदे उसको ज᠁ दिल्लगी ही रहेगी।

दासी— बहुत अच्छा।

[जाती

पहिली— जरा दिल्ली का हाल-चाल ही जाना जायगा। ᠁ है, मुआ नया बादशाह बड़ा काँइयाँ है।

दूसरी— हत्यारा, भाइयों के सिर काटकर तख्त पर ᠁ है।

पहिली— चुप वह आरही है, शैतान की नानी!

[बुढ़िया आती है]

एक— बुड्ढी तेरे पोपले मुँह में कितने दाँत हैं ?

बुढ़िया— बेटी, मैं दिल्ली रहती हूँ।

दूसरी— दिल्ली में बिल्लियाँ बहुत हैं ?

बुढ़िया— मैं तस्वीरें बेचती हूँ, मेरा बेटा मुसौव्वर है।

पहिली— तू पत्थर है, दिखा कैसी तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— (सब को घूरकर) मगर मेरी तस्वीरें तुम्हारे लायक नहीं हैं, यह राजकुमारी के लिए लाई हूँ।

[सब जोर से खिलखिलाकर हँसती हैं]

बुढ़िया— तुम हँसती क्यों हो ?

एक— हँसी की बात ही है (आगे बढ़कर) मैं राजकुमारी हूँ, दिखा तस्वीर।

दूसरी— दूर हो, राजकुमारी मैं हूँ, कहाँ हैं तस्वीरें ?

तीसरी— इधर देख, मैं हूँ राजकुमारी।

बुढ़िया— (रोकर) या खुदा, ये सभी राजकुमारियाँ हैं या एक भी नहीं।

[सब खिलखिलाकर हँसती हैं। राजकुमारी चारुमती आती है—सब सखियाँ चुप हो जाती हैं]

चारुमती— तुम सब इतना क्यों हँस रही हो ?

एक— यहाँ एक दिल्ली की बूढ़ी बिल्ली आई है।

कुमारी— बेचारी बुढ़िया को तंग न करो—कौन है यह ?

सुनती ही नहीं। (हँसकर) उसने मुझे घूँस में सुर्मे की शीशी दी है।

एक सहेली—क्या करामात है, इस सुर्मे में ? देखूँ......

दूसरी— इसे आँख में लगाने से एक के दो दीखते हैं।

तीसरी— तब तो बहुत अच्छा है, एक शीशी मैं भी लूँगी

दासी— उस बुढ़िया को क्या कहदूँ ?

पहिली— यह तो कह, वह है कौन ?

दासी— मुसलमानी है ? दिल्ली से आई है, मिस्सी, स् और तस्वीरें बेचती है। कहती है, राजकुमारी लिए तस्वीरें लाई है ?

पहिली— अरी, उसका रंग-रूप कैसा है ?

दासी— मुँह में एक दाँत नहीं, चहरे पर लकीरें ही लक आँखों में सुरमा और मुँह में पान।

पहिली— अरे वाह, उसके यह ठाठ। यहाँ भेजदे उसको जर दिल्लगी ही रहेगी।

दासी— बहुत अच्छा।

[जाती

पहिली— जरा दिल्ली का हाल-चाल ही जाना जायगा। सु है, मुआ नया बादशाह बड़ा काँइयाँ है।

दूसरी— हत्यारा, भाइयों के सिर काटकर तख्त पर बै है।

पहिली— चुप वह आरही है, शैतान की नानी !

[बुढ़िया आती है]

एक— बुड्ढी तेरे पोपले मुँह में कितने दांत हैं ?

बुढ़िया— बेटी, मैं दिल्ली रहती हूँ।

दूसरी— दिल्ली में बिल्लियाँ बहुत हैं ?

बुढ़िया— मैं तस्वीरें बेचती हूँ, मेरा बेटा मुसौव्वर है।

पहिली— तू पत्थर है, दिखा कैसी तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— (सब को घूरकर) मगर मेरी तस्वीरें तुम्हारे लायक नहीं हैं, यह राजकुमारी के लिए लाई हूँ।

[सब जोर से खिलखिलाकर हँसती हैं]

बुढ़िया— तुम हँसती क्यों हो ?

एक— हँसी की बात ही है (आगे बढ़कर) मैं राजकुमारी हूँ, दिखा तस्वीर।

दूसरी— दूर हो, राजकुमारी मैं हूँ, कहाँ हैं तस्वीरें ?

तीसरी— इधर देख, मैं हूँ राजकुमारी।

बुढ़िया— (रोकर) या खुदा, ये सभी राजकुमारियाँ हैं या एक भी नहीं।

[सब खिलखिलाकर हँसती हैं। राजकुमारी चारुमती आती है—सब सखियाँ चुप हो जाती हैं]

चारुमती—तुम सब इतना क्यों हँस रही हो ?

एक— यहाँ एक दिल्ली की बूढ़ी बिल्ली आई है।

कुमारी— बेचारी बुढ़िया को तंग न करो—कौन है वह ?

एक सखी—वह दिल्ली की तस्वीर बेचने वाली है । चुड़
कहती है, तस्वीरें हमारे लायक नहीं—कुमारीजो
लिए हैं।

चारुमती—(मुस्करा कर) मेरे लिए जो तस्वीर लाई
दिखाओ ।

बुढ़िया— मैं कुर्बान। कुमारीजी, तुम तो खुद ही एक तस
हो।

चारुमती—तुम अपनी तस्वीरें तो दिखाओ ।

बुढ़िया— देखो, ये अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, नूरजहाँ
तस्वीरें हैं ।

चारुमती—क्या तुम्हारे पास हिन्दू रानियों की तस्वीरें
हैं ?

बुढ़िया— जी हाँ, हैं। राजा मानसिंह, जगतसिंह और जय
की तस्वीरें हैं, देखिए ।

[निकाल कर देती है]

चारुमती—ये हिन्दू राजाओं की तस्वीरें नहीं हैं, बादशाह
नौकरों की हैं ।

बुढ़िया— (और तस्वीरें निकालकर) यह राणा प्रतापि
अमरसिंह, करनसिंह, जसवन्तसिंह की तस्वीरें हैं

चारुमती—हाँ, इन्हें रखदो, इन्हें मैं मोल लूंगी। यह कौन
तस्वीर तुमने छिपाली ?

बुढ़िया— माफ कीजिए राजकुमारी ! यह तुम्हारे दुश्मन की तस्वीर है।

चारुमती— किसकी है, देखूँ !

बुढ़िया— उदयपुर के राना राजसिंह की है। वे तुम्हारे पिता के वैरी हैं।

चारुमती— वीर राजपूत स्त्रियों से वैर नहीं रखते। यह तस्वीर मैं मोल लूँगी। (सखियों से) सखियो, देखो, यह एक सच्चे राजपूत की तस्वीर है। (बुढ़िया से) और किस-किस की तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— देखिए-यह आलमगीर बादशाह की तस्वीर है।

चारुमती— अजब तस्वीर है। मैं इसे जूते की नोक पर मारती हूँ।

बुढ़िया— खामोश, अगर बादशाह सुन पाएँगे तो रूपनगर के किले की एक ईंट तक न मिलेगी।

चारुमती— यह बात है ? सहेलियो, इस तस्वीर पर बारी-बारी से एक-एक लात मारो।

[सब बारी-बारी से लात मारती हैं]

चारुमती— जिसने अपने सगे भाइयों के रक्त से हाथ रँगे और अपने बूढ़े बाप को कैद करके तख्तेताऊस पर अनुम चरण रख मुगलों के इतिहास को कलंकित किया है, उसकी एक राजपूतनी यही प्रतिष्ठा कर सकती

है। लो, बीस मुहर दाम और बीस मुहर इनाम। जाओ।

[बुढ़िया हक्का-बक्का होकर जाती है, सहेलियाँ दंग रह जाती हैं]

[पर्दा गिरता है]

अङ्क दूसरा

पहिला दृश्य

[स्थान—दिल्ली की जामा मस्जिद के सामने का मैदान : मस्जिद में जुमे की नमाज की धूमधाम हो रही है। आम रास्ते पर बहुत से हिन्दुओं की भीड़ इकट्ठी हो रही है। घुड़सवार सिपाही भीड़ हटाना चाहते हैं। समय—प्रातःकाल]

एक सिपाही—(एक नागरिक से) कौन हो जी तुम ?

नागरिक—*क्या मैं ? यह तो तुम अन्दाज से ही जान सकते थे*—मेरे एक नाक, दो कान, एक मुँह, दो हाथ, दो पैर हैं, जैसे कि तुम्हारे हैं।

सिपाही— हम पूछते हैं जी कि तुम क्या काम करते हो ?

नागरिक—बहुत से काम करता हूँ। टेढ़ों को सीधा करता हूँ, सीधों को झुका देता हूँ। तुम्हारा कुछ काम हो तो कहो।

सिपाही— रहते कहाँ हो ?

नागरिक—इसी शहर में।

सिपाही— हिन्दू कि मुसलमान।

नागरिक— हिन्दू ।

सिपाही— तो चलते-फिरते नजर आओ ।

नागरिक— क्यों ? किसलिए ?

सिपाही— हुक्म नहीं है ।

नागरिक— क्यों हुक्म नहीं है ?

सिपाही— बहस करता है ! बदजात !

नागरिक— गाली मत देना, खबरदार ! जानते हो मैं टेढ़ों को सीधा......

सिपाही— (धक्का देकर) तो ले—हो सीधा...... ।

[दोनों में गुत्थमगुत्था होती है, भीड़ इकट्ठा होती है]

एक— क्या मामला है, क्या झमेला है ?

नागरिक— मियाँजी कहते हैं, चलते-फिरते नजर आओ । गाली देते हैं और गर्दन नापते हैं ।

दूसरा— अन्धेर है अन्धेर गाली क्यों दी जी ?

तीसरा— और हाथापाई क्यों की ?

चौथा— यह तो अन्धेरगर्दी है !

पाँचवाँ— बीच बाजार यह जुल्म !

सिपाही— यहाँ यह क्यों खड़ा था ?

नागरिक—सड़क पर खड़े थे, सड़क किसी के बाप का नहीं है ।

दो-चार आदमी—बेशक, अब रास्ते पर लोग चलने-फिरने भी न पावेंगे !

सब— अन्धेर है, अन्धेर !

सिपाही— हुक्म नहीं है, हुक्म ।

एक— हुक्म क्यों नहीं है ?

सिपाही— जहाँपनाह की सवारी जुमे की नमाज अदा करने को आ रही है, तुम गधे हो ।

दूसरा— (भीड़ में से) गधे तुम हो । हम बादशाह सलामत से अर्ज करने आए हैं ।

सिपाही— किसने हमें गाली दी ! उसे हम गिरफ्तार करेंगे । पकड़ो उसे ।

दो-चार नागरिक—गाली तुमने दी, तुमने ।

[दस-बीस आदमी इकट्ठे हो जाते हैं]

सब— क्या हुआ ? क्या हुआ ?

दो-चार— हंगामा हो गया—जुल्म है, जुल्म ।

दो-चार और—अन्धेर है अन्धेर ।

कुछ लोग—क्या हुआ भाई, क्या हुआ ?

एक— यह सिपाही कहता है, यहाँ से हट जाओ ।

दो-चार— क्यों हट जाएँ ? हम यहीं जमे रहेंगे ।

एक— हम जहाँपनाह से अर्ज करने आए हैं । अर्ज बिना किए नहीं हटेंगे ।

दो-चार— हम अपनी जान देंगे ।

[एक अफसर घोड़ा दौड़ाता हुआ आता है]

अफसर— यह क्या हंगामा है ?

सिपाही— ये सरकश बागी लोग इकट्ठे हो रहे हैं ।

सब लोग—हम नागरिक हैं। हम जहाँपनाह से अर्ज करने आये हैं।

सिपाही— इन्होंने बादशाह सलामत को गाली दी है। ये सब फसाद करने को आमादा हैं। ये सब बागी हैं।

सब— हम बादशाह सलामत से अर्ज करेंगे।

अफसर— तुम सबको तोप के मुँह पर उड़वा दिया जायगा।

सब— हम अपनी जान हथेली पर धरे हुए हैं। हम मर मिटेंगे पर अर्ज किए बिना न जाएँगे।

[किले से तोपों की सलामी दागी जाती है]

अफसर— तुम सब लोग भाग जाओ, जहाँपनाह जुमे की नमाज अदा करने तशरीफ ला रहे हैं।

सब— हम हजरत सलामत से अर्ज करेंगे। हम......

अफसर— (सवारों से) घोड़े छोड़ दो और रौंद डालो बदमाशों को!

[घोड़ों से कुचले जाकर कुछ लोग चिल्लाते हैं। बादशाह की सवारी आती है। नकीब चिल्लाते हैं]

नकीब— (उच्च स्वर से) रास्ता करो—रास्ता करो—हटो—बचो।

सब— दुहाई खुदावन्द। हमारी अर्ज सुनी जाय। हम गरीब हिन्दू जजिया नहीं दे सकते।

एक— जजिया हमारे बाप-दादों ने भी कभी नहीं दिया।

दूसरा— जन्नत नशीन जलालुद्दीन अकबरशाह ने उसे माफ कर दिया था। उसके बाद बादशाह जहाँगीर ने और

आला हजरत शाहजहाँ ने भी उसे माफ रखा था।

सब— (चिल्लाकर) जजिया माफ किया जाय। हम नहीं दे सकते–हम नहीं देंगे।

नकीब— हटो, बचो, रास्ता साफ करो।

कुछ लोग—सड़क पर लेट जाओ। हम अर्जी बिना मंजूर कराए न हटेंगे।

[बहुत से लोग सड़क पर लेट जाते हैं]

बादशाह— यह क्या हंगामा है ?

वजीर— हुजूर शहर के हिन्दू जमा हैं।

बादशाह— (त्यौरियों में बल डालकर) किस लिए ?

वजीर— जजिया के खिलाफ जहाँपनाह की खिदमत में अर्ज करने।

बादशाह— उन्हें रास्ते से हटाओ।

वजीर— वे रास्ते पर लेट गए हैं। वे कहते हैं, हम अर्जी कुबूल कराकर हटेंगे।

बादशाह— (क्रुद्ध स्वर से) उन पर मस्त हाथियों को छोड़ दो।

[भीड़ पर मस्त हाथी छोड़े जाते हैं। लोग कुचले जाकर चीखते-चिल्लाते, रोते-पीटते भागते हैं। कुछ मारे जाते हैं]

[पर्दा गिरता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : समय—मध्याह्न : महाराणा राजसिंह का दर्बार: महाराणा गद्दी पर विराजमान हैं। खास-खास सरदार अपने-अपने स्थानों पर बैठे हैं। राठौर दुर्गादास और सैनिक सामने खड़े हैं]

राणा— (शोकपूर्ण स्वर से) तो जोधपुर आज अनाथ हुआ। राठौरपति जसवन्तसिंह अब नहीं है ?

दुर्गादास— हाँ महाराणा, अपने देश और मित्रों से दूर जमरुद के किले में उन्होंने वीर प्राण त्यागे।

राणा— एक नरवर उठ गया (सिर झुका लेते हैं)

दुर्गादास— हम लोग—महाराज ! रानियों और राजपरिवार सहित मारवाड़ लौट रहे थे। लाहौर में हमें रुकना पड़ा। रानी माँ ने वहाँ कुँवर को जन्म दिया।

राणा— जोधपुर का यह भावी राजा चिरंजीवी हो।

दुर्गादास— अन्नदाता का आशीर्वाद सच हो। परन्तु हमारी दुर्दशा की कहानी अत्यन्त करुण है।

राणा— कहो ठाकुर, मेवाड़ राठौर राजवंश की हर विपत्ति में उसके साथ रहेगा।

दुर्गादास— महाराणा की जय हो। इसी आशा से मैं शरण आया हूँ। लाहौर में हमें खबर मिली कि इधर महाराज का स्वर्गवास हुआ और उधर दिल्ली में

पाटवी कुँवर पृथ्वीसिंह मार डाले गए।

राणा— (आश्चर्य से) हैं! मार डाले गए?

दुर्गादास—(आँसू भरकर) हाँ महाराणा, बादशाह ने उन्हें दर्बार में बुलाकर जो खिलत दी थी, वह विष में रंगी थी। कुमार खिलत पहन घर लौट रहे थे कि मार्ग ही में उनका प्राण निकल गया।

राणा— पिता को कैद और भाइयों को कत्ल करने वाला क्रूर बादशाह जो न करे सो थोड़ा।

दुर्गादास—यह वज्र के समान खबर सुनकर भी हमने नवशिशु के जन्म पर सन्तोष किया, पर हमें तुरन्त ही खबर मिली कि लावारिस होने के कारण जोधपुर खालसा कर लिया गया है और रानियों और राजपरिवार को दिल्ली हाजिर होना चाहिए।

राणा— यह किसलिए ठाकुर?

दुर्गादास—बादशाह को विश्वास नहीं हुआ कि रानी को और कुँवर जन्मा है, वह उसकी तस्दीक किया चाहता था।

राणा— अवश्य इसमें कोई गूढ़ उद्देश्य होगा।

दुर्गादास—ऐसा ही था, महाराज! दिल्ली जाकर हम रूपनगर की हवेली में ठहरा दिए गए। वहाँ जाते ही शाही सेना ने हमें घेर लिया और बलपूर्वक कुमार को माँगा। अन्त में हमें प्राणों पर खेलना पड़ा। कुमार

को किसी भांति बचाकर हम मुगल सैन्य की छाती पर पैर रख निकल भागे। महाराणा, इस विपत्ति के समुद्र से मैं, मुकुन्ददास, सोनिंग और महारानी बचीं शेष सब कट मरे--राजवर्ग की सब स्त्रियाँ वहीं जल कर खाक हो गईं। पर कुँवर की रक्षा हो गई।

राणा— (क्रोध और आवेश में) धन्य शूर, धन्य वीर। कुमार और रानी अब कहाँ हैं।

दुर्गादास— अन्नदाता की शरण में।

[सोनिंग को संकेत करना है। वह कुमार शिशु को लाकर राणा की गद्दी पर डाल देता है]

राणा— (तलवार छूकर) शरणागत को अभय! ठाकुर दुर्गादास, जब तक मेवाड़ में एक भी वीर तलवार पकड़ने योग्य है तब तक मारवाड़ का यह भावी अधीश्वर मेवाड़ की छत्रछाया में फले-फूले।

दुर्गादास— महाराणा की जय हो। महाराज (बालक को गोद में उठा लेता है) मारवाड़ के अनाथों पर आपने बड़ी कृपा की।

राणा— कृपा नहीं दुर्गादास, यह तो धर्मपालन है। जो राजा धर्म का पालन न करे, शरणागत को विमुख करे वह अधर्मी है। बादशाह आलमगीर ने प्रारम्भ ही से अनर्थ किया है। उसका राज्यारोहण रक्तपात और अन्याय से हुआ है। जिस मुगल साम्राज्य की जड़

राजपूतों की तलवारों को खरीदकर अकबर, जहांगीर और शाहजहां ने मजबूत की—उसे यह खोखली कर रहा है। राजपूताने की जिस वक्त सोई हुई आत्मा जाग उठेगी तख्त भस्म हो जायगा।

दुर्गादास—महाराणा! दुर्भाग्य से राजपूताना सो रहा है। आत्म-सम्मान और सगठन के भाव उसने भुला दिए हैं। इसीसे उसकी वीरता में कालिख लग गई है। इसे जगाना होगा। महाराज! आप हिन्दू-पति हैं। आपकी ओर तमाम राजपूताने की दृष्टि है। राठौरों की बांह आपने गही हैं। राठौरों की तलवारें आपके चरणों में हैं।

राणा—वीरवर, निश्चय रखो। राठौर और सीसोदियों की शक्ति मिलकर मुगल साम्राज्य का विध्वंस कर देगी, परन्तु अभी हमें समय की प्रतीक्षा करनी होगी। हां, महाराणी अब कहां हैं? मेवाड़ के राजमहलों की यदि वे शोभा बढ़ावेंगी तो यह मेवाड़ का सौभाग्य है।

दुर्गादास—धन्यवाद, महाराणा! रानी मा और हम लोग अब मारवाड़ को जगाएंगे। हम घर-घर अलख जगाएंगे। हम बिलतियों की पहाड़ियों को चकनाचूर करेंगे। जबतक हमारा प्यारा जोधपुर स्वाधीन न हो जायगा।

राणा— धन्य वीर, धन्य राठौर ! अभी मैं जोधपुर के भावी अधिपति के गुजारे के लिए १२ गाँवों सहित केलवे का पट्टा लिख देता हूँ।

दुर्गादास— महाराणा की जय ! अब हमें आज्ञा हो तो देश-प्रेम और देशभक्ति के जोग साधने को हम घर-घर अलख जगाएँ और ऐसा सरजाम करें जिससे मुगल तख्त एक दिन जल कर राख हो जाय।

राणा— जाओ वीरवर ! समय पर यह अवश्य होगा।

[पर्दा गिरता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—दिल्ली का रङ्गमहल : शाहजादी जेबुन्निसा का खास कमरा : समय—प्रातःकाल : शाहजादी जेबुन्निसा अकेली अस्तव्यस्त अपने कमरे में बैठी है।]

शाहजादी— (स्वगत) रुए जमीन के इस बहिश्त की—जहाँ हवा को भी बिना हुक्म अन्दर आने की ताब नहीं, आज मैं मलिका हूँ। अब्बा पर रोशनआरा के बड़े-बड़े अहसान हैं। कुछ दिन इसी से उसने रङ्गमहल पर हुकूमत की। बादशाह आलमगीर नहीं, रोशनआरा बेगम हैं। मगर वे दिन लद गए। मेरी बेचारी तीन बहनों की किस्मतें अब्बा ने मेरे बदकिस्मत चचा-

जात कैदी भाइयों के साथ शादी करके बाँध दीं। मगर मैं वह पंछी नहीं जो कैद होकर रहूँ। वसन्त में भौंरा नए-नए फूलों का रस लेता है, गूँजता है, वह कैसा प्यारा लगता है। मगर इस अटूट दरिया के न थमने वाले बहाव का अंजाम क्या होगा? (कुछ सोचकर) क्या परवाह है, मैं जेबुन्निसा हूँ, मुगल बादशाहों के इस रङ्गमहल की रानी मैं हूँ।

[बाँदी आती है]

बाँदी— हजरत बेगम साहेबा, बी फितरत हुजूर की कदमबोसी की ख्वास्तगार है।

शाहजादी—जहन्नुम में जाय वह। अभी मुलाकात नहीं होगी। वह आईना इधर कर।

बाँदी— (आईना सामने करके) खुदावन्द! वह कहती है राजपूताने से बढ़िया सुर्मा आया है।

शाहजादी—(चौंककर) यह तो अच्छी खबर मालूम देती है, कौन है वह?

बाँदी— हुजूर फितरत।

शाहजादी—उसे यहीं भेज दे।

बाँदी— जो हुक्म।

[जाती है]

जेबुन्निसा—(स्वगत) फितरत काम की खबर लाती है। देखूँ, इस बार क्या खबर लाई है। यह राजपूताने का

सुर्मा क्या माने ? (कुछ सोचकर) राजपूताना ! अजब-
बहशत है इस नाम में ।

(फितरत आकर जमीन चूमती है)

शाहजादी—इस वक्त क्यों आई शैतान ?

फितरत— हुजूर काम की खबर है ।

शाहजादी— कह ।

फितरत— बख्शीश दें तो कहूँ !

शाहजादी— कह न ।

फितरत— मैं राजपूताना से आ रही हूँ, रूपनगर गई थी ।

शाहजादी— (त्योरियों में बल डालकर) फिर ?

फितरत— मेरे पास तस्वीरें थीं, वे मैंने वहाँ की राजकुमारी को दिखाईं ।

शाहजादी— कौन २ तस्वीरें थीं ।

फितरत— सभी बादशाहों की थीं हुजूर !

शाहजादी— खबर क्या है ?

फितरत— एकदम गुस्ताखाना फेल ।

शाहजादी— कह बदजात ।

फितरत— (हाथ जोड़ कर) खुदावन्द ! मेरे पास हजरत पीर दस्तगीर आलमगीर की तस्वीर थी, वह मैंने राज-कुमारी को दिखाई थी ।

शाहजादी— सिजदा किया उसने ।

फितरत— तोबा-तोबा ! हुजूर उसने तस्वीर की तौहीन की ।

शाहज़ादी— क्या किया ?

फ़ितरत— वह कलमा ज़बान पर नहीं ला सकती।

शाहज़ादी— तो तुझे कुत्तों से नुचवाऊँ ?

फ़ितरत— (गिड़गिड़ाकर) हुज़ूर शाहज़ादी ! गुलाम की जान बख्शी जाय तो अर्ज करूँ।

शाहज़ादी— कह फिर, हरामज़ादी।

फ़ितरत— उस मगरूर काफ़िर लड़की ने हज़रत की तस्वीर पर लात मारी।

शाहज़ादी— (चौंककर) लात ?

फ़ितरत— और यही उनकी सहेलियों ने किया।

शाहज़ादी— (होंठ चबाकर) फिर !

फ़ितरत— हुज़ूर, मैं अपनी जान लेकर भागी।

शाहज़ादी— (सोचकर) खूबसूरत है वह ?

फ़ितरत— क्या कहूँ हुज़ूर, तस्वीर की मानिन्द।

शाहज़ादी— सिन क्या है ?

फ़ितरत— सरकार, अभी अधखिली कली है।

शाहज़ादी— हमसे भी ज्यादा खूबसूरत है क्या ?

फ़ितरत— (दोनों कानों पर हाथ रखकर) तोबा-तोबा ! कहाँ हुज़ूर शाहज़ादी—कहाँ वह बाँदी।

शाहज़ादी— (हँसकर) उदयपुरी बेगम की बनिस्बत ?

फ़ितरत— (हँसकर) हुज़ूर ! वह चाँद का टुकड़ा है।

शाहज़ादी— बदनसीब मिलेगी (पुकार कर) कोई है ?

[एक तातारी बाँदी नंगी तलवार लिए आती है]

बाँदी— हुक्म ।

शाहज़ादी—रंगमहल के खजाञ्ची पर इस औरत को इनाम का परवाना जारी करने को मीर मुन्शी से कह दे। (बुढ़िया से) दूर हो शैतान।

[बुढ़िया और बाँदी जाती है]

शाहज़ादी—(स्वगत) काम की खबर है। अब उस जजियाना बाँदी का गुरूर मुझे नहीं बर्दाश्त होता। इस रंगमहल का वही एक खटका है। वह काफिर अब्बा को अपने चुङ्गल में बुरी तरह फाँसे है। वह भूल गई है, जब बुर्दाफरोशों के हाथ से उसे बदनसीब दारा ने खरीदा था। आज वह मलिका है और मुझे भी उसे सलाम करना पड़ता है। कम्बख्त कृस्तान हर दम शराब में बुत बनी रहती है। उसे खोद निकालने का यह अच्छा खासा जरिया होगा। यह राजपूत मगरूर लड़की अगर बादशाह की बेगम बन सके। (कुछ सोचकर) ठीक है। वह आग जलाऊँ कि जिसका पार नहीं।

[सोचती है। पर्दा गिरता है]

चौथा दृश्य

[स्थान—मेवाड़ का विकट वन : एक पहाड़ी पड़ाव : समय—सन्ध्या-काल : भीलों की एक छोटी-सी बस्ती : एक बूढ़ा थका हुआ ब्राह्मण सिर पर बड़ा-सा बोझ लिए आता है]

ब्राह्मण— अरे भाइयो, इस ब्राह्मण को आज रात आश्रय मिलेगा ?

एक भील—कौन हो तुम ?

ब्राह्मण— ब्राह्मण हूँ, मेरे साथ देवता हैं।

[सब भील खड़े हो जाते हैं]

एक बूढ़ा भील—(आगे बढ़कर) तुम्हारे साथ देवता है ?

ब्राह्मण— हाँ, भाई !

भील— कहाँ से आ रहे हो ?

ब्राह्मण— कहाँ से बताऊँ भाई। मेरी दुःख की कहानी बहुत भारी है। बैठो तो कहूँ। आज रात आश्रय दोगे ?

भील— आराम से बैठो। आग जल रही है। देवता को सिर से उतार लो।

[ब्राह्मण सिर से बोझ उतार एक ऊँची जगह रखता है]

भील— (निकट आकर) अब कहो।

ब्राह्मण— मैं जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर सब राजपूताना घूम आया।

भील— किस लिए ब्राह्मण देवता ?

ब्राह्मण— (गद्‌गद कण्ठ से) देवता की रक्षा के लिए। जो देवता जगत की रक्षा करते हैं। जिनकी कृपा से मेघ-जल बरसाता है, रात्रि चाँदनी बखेरती है। सूर्य तपता है। दिन सौन्दर्य बखेरता है, आज भारत में उनकी रक्षा नहीं हो सकती। आर्यों की भूमि भारत से धर्म उठ गया।

भील— नहीं, कौन देवता का अपमान करता है। हम उसे मार डालेंगे।

ब्राह्मण— भोले भाइयो! तुम्हारी शक्ति से बाहर की बात है। जिसके भय से राजपूताना थर-थर काँपता है। राजा और महाराजा जिसकी सेवा में खड़े रहते हैं, उसी के भय से मैं देवता के लिए इस द्वार से उस द्वार और उस द्वार से इस द्वार मारा-मारा फिर रहा हूँ—उसी के भय से कोई मुझे आश्रय नहीं देता। तुम भी उससे मेरे देवता की रक्षा नहीं कर सकते? (आँखों से आँसू पोंछता है)।

भील— कौन है, वह ऐसा बली?

ब्राह्मण— आलमगीर बादशाह। जिसने बाप को कैद करके और भाइयों को कत्ल करके दिल्ली के तख्त को कलंकित किया है। जो मुगलवंश का राहू होकर जन्मा है। उसने हिंदुस्तान के तमाम मन्दिरों को ढहवाना शुरू कर दिया है। देश के बड़े-बड़े प्रसिद्ध

धर्मस्थान ढहकर आज खण्डहर हो गए। देवताओं के अङ्ग खण्ड-खण्ड हो गए। पर कोई हिन्दुओं की लाज रखने वाला माई का लाल ऐसा नहीं जो इस पाप से भारत का उद्धार करे।

भील— (उत्तेजित होकर) ऐसा न कहो। धरती कभी वीर-विहीन नहीं होती है। ऐसा ही एक वीरवर अभी भी पृथ्वी पर है।

ब्राह्मण— कौन है वह ?

भील— महाराणा राजसिंह, मेवाड़ का अधिपति। हिन्दू-सूर्य।

ब्राह्मण— मैंने उनका यश सुना है और मैं वहीं जा रहा हूँ। क्या शरण मिलेगी ?

भील— अवश्य मिलेगी। तुम्हारे साथ कौन देवता हैं।

ब्राह्मण— द्वारकाधीश हैं। हम लोग गोवर्धन से भागे आ रहे हैं।

भील— ब्राह्मण देवता, स्नान-पूजन करके देवता को भोग लगा कर निर्भय विश्राम करो। देवता की प्रतिष्ठा मेवाड़ की वीर-भूमि में अवश्य होगी।

ब्राह्मण— (प्रसन्न होकर) भगवान् आपकी वाणी सुफल करे।

[आँख मीचकर भगवान की प्रार्थना करता है]

[पर्दा बदलता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—दिल्ली का लाल किला : रंगमहल का भीतरी भाग : उदयपुरी बेगम का शयनकक्ष : बादशाह औरंगजेब और उदयपुरी बेगम बातें कर रहे हैं। समय—रात्रि]

उदयपुरी बेगम—(शराब का प्याला भरकर) लीजिए जहाँपनाह, यह प्याला अपनी उस चेहती के नाम पर, जिसने हुजूर की तस्वीर को जूतियों से कुचल डाला (प्याला बढ़ाती है)।

बादशाह—(गुस्से में भरकर) शराब रहने दो, यह कहो कि यह खबर तुम्हें किसने दी ?

बेगम—(नखरे से) हुजूर, उड़ती चिड़िया खबर दे गई। फिर इसमें मलाल ही क्या—हसीनों के चोचले जो ठहरे। अगर हुजूर को उस नाज़नी के नाम का यह प्याला पीने में दरेग़ है तो बन्दी ही पीती है। (प्याला पीकर) वाह, क्या लज़ीज शराब है। ये फिरंगी शराब बनाने में लाजवाब है। तो जहाँपनाह......

बादशाह—मैं तुमसे सही तौर पर यह जानना चाहता हूँ कि तुम्हें यह खबर किसने दी ?

बेगम—किसी ने दी, मगर है सच। (दूसरा प्याला भरती है)

बादशाह—बेगम, तुम जानती हो कि मैं तुम्हें किस कदर प्यार करता हूँ। यहाँ तक कि जिस शराब के पीने

की सल्तनत भर में मनाही है, तुम्हारे महल में नहीं।

बेगम— (शराब भरती हुई) जानती हूँ, जहाँपनाह ! मगर लोंडी का इतना ख्याल उस रूपनगर की रानी के बाद रहेगा या नहीं यह कौन जाने ? (हँसकर) जाने दीजिए, जो होगा देखा जायगा। लीजिए, एक जाम पीकर गम गलत कीजिए।

बादशाह—मुझे माफ करो बेगम ! मैं संजीदी से जानना चाहता हूँ कि क्या यह खबर सच है ?

बेगम— एकदम सच।

बादशाह—तुम यह कहना चाहती हो कि तुम्हें यह खबर तुम्हारे मातबर आदमी ने दी है ?

बेगम— बेशक ! (प्याला पीकर) हुजूर का इरादा क्या है ?

बादशाह—मैं रूपनगर की ईंट से ईंट बजा दूँगा।

बेगम— बादशाह आलमगीर के लिए यह एक अदना काम है। मगर इसी सिलसिले में क्या हुजूर मेरी एक ख्वाहिश पूरी करेंगे।

बादशाह—कौनसी ख्वाहिश बेगम।

बेगम— एक छोटी-सी ख्वाहिश।

बादशाह—फ़रमाइए सुनूँ भी।

बेगम— महज मजाक।

बादशाह—तुम क्या चाहती हो बेगम ?

बेगम— हुजूर, ये बदशक्ल गेंड़े की सी शक्लवाली बाँदियाँ मेरा तम्बाकू ठीक तौर पर नही भर पाती हैं। सुना है राजपूताने की बाँदियाँ तम्बाकू भरना खूब जानती हैं। क्या मजा हो जो यह रूपनगर की बाँदी मेरा तम्बाकू भरे। जहाँपनाह, यह अदना-सी मेरी फर्माइश है।

बादशाह— (उठते हुए) तुम्हारी यह अदना फर्माइश पूरी की जायगी। रूपनगर की वह बाँदी तुम्हारा तम्बाकू भरेगी।

बेगम— (खुश होकर प्याला भरती हुई) शुक्रिया जहाँपनाह ! तो इसी खुशी में हुजूर एक प्याला इस विलायती शराब का न पीजिएगा ?

बादशाह— नही बेगम, अभी मुझे बहुत काम है।

[जाता है]

छठा दृश्य

[स्थान—रूपनगर के राजा का दीवानखाना : राजा और मन्त्री बातें कर रहे हैं। समय—अपराह्न।]

मन्त्री— महाराज ! आज ही दिल्ली को जवाब देने का आखिरी दिन है। आज शाही कासिद को विदा करना होगा।

राजा— मैं इतना अधम नहीं। जीते जी अपनी कन्या विधर्मी को नहीं दूँगा। मेरे तन में क्षत्रिय रक्त है। मेरे पूर्वजों ने अपनी आन पर प्राण दिए हैं। बादशाह को लिख दो। हमें उनका प्रस्ताव स्वीकृत नहीं है।

दीवान— महाराज! कल्पना कीजिए कि अभी तो बादशाह ने विनय शिष्टाचार से राजपुत्री की याचना की है, यदि वह जोर-जुल्म पर उतारू होकर बल से कुमारी का डोला ले जाय तो कौन हमारी रक्षा करेगा? राजपूताने के सभी राजपूतों की बेटियाँ शाही रङ्ग-महल की शोभा विस्तार कर रही हैं! एक-दो जो बच रहे हैं उनकी गिनती उँगली पर गिनने योग्य है। वे तभी तक बच सकते हैं जब तक शाही क्रूर दृष्टि उनकी ओर न हो। फिर जो लोग शाही रिश्ते-दार हो चुके—वे अपने मुँह की कालिख पोंछने को चाहते हैं कि दूसरे राजपूत क्यों अछूते बचे रहें। फिर राजपूतों में संगठन नहीं, एकता नहीं। स्वार्थ और घमण्ड ने राजपूतों की वीरता और तलवार की धार को उन्हीं के लिए शाप बना दिया है। इससे महाराज, इस विषय पर जैसा ठीक समझें विचार कर लें।

राजा— विचार हो चुका—मैं शाही महल में लड़की नहीं दूँगा।

दीवान— तो महाराज, इस छोटे से राज्य की कुशल नहीं। हमें अपना सब कुछ खोना पड़ेगा।

राजा— मै खुशी से सर्वस्व दूँगा। पर अपने राजपूती जीवन पर दाग न लगाऊँगा।

दीवान— अभयदान मिले तो और एक बात निवेदन करूँ।

राजा— निर्भय होकर जो चाहे कहिए। आप राज्य के पुराने शुभचिन्तक और हमारे मित्र हैं। आप कभी कच्ची बात न कहेगे।

दीवान— महाराज, आत्मरक्षा का और उपाय है।

राजा— वह क्या ?

दीवान— राणा राजसिंह को राजकुमारी ब्याह दीजिए। राणा राजसिंह इस समय राजपूताने का देदीप्यमान नक्षत्र है। वह परम राजनीतिज्ञ, चतुर, कर्म, वीर और प्रतापी है। राजपूताने का यही केन्द्र है। उसकी मित्रता और सम्बन्ध भविष्य में हमारे लिए परम सुखद होगा।

राजा— यह असम्भव है, दीवानजी, जिस शत्रु ने मेरे राज्य पर आक्रमण करके मेरा गढ़ छीन लिया है, उसे तो मैं इसी तलवार का तीखा पानी पिलाने का इच्छुक हूँ। उसे मैं बेटी दूँगा ?

दीवान— महाराज, बड़े स्वार्थों की रक्षा के विचार से छोटे-मोटे स्वार्थ त्यागने पड़ते हैं। यह अवसर क्रोध

करने का नहीं है। राजनीति कहती है कि यदि हम राणा का यह अपराध क्षमा कर उसके पास राजकुमारी के सम्बन्ध का सन्देश भेजेंगे, तो सब ओर कल्याण ही कल्याण है। पहिली बात तो यह होगी कि राजकुमारी को सर्वश्रेष्ठ घर-वर मिलेगा और उसकी चिन्ता के भार से हम मुक्त होंगे। दूसरे राजसिंह जैसे शत्रु से मित्रता होगी। तीसरे राजपूतों के संगठन की एक जड़ जमेगी। आगे महाराज की जैसी मर्जी।

राजा— मैं राजसिंह को क्षमा नहीं कर सकता। पहले माण्डलगढ़ लूँगा, पीछे दूसरी बात।

दीवान— महाराज! विपत्ति के बादल हमारे छोटे-से राज्य पर मँडरा रहे हैं। इनसे कैसे उद्धार होगा? सेवक की प्रार्थना है कि फिर से इस विषय पर विचार कर लिया जाय।

राजा— अब और कुछ विचारने का काम नहीं है। क्षत्रिय का जीवन एक पानी का बुलबुला है। रहा रहा—न रहा न रहा। आप बादशाह को साफ-साफ इन्कार कर दीजिए।

दीवान— महाराज, आज्ञा पाऊँ तो एक निवेदन करूँ?

राजा— (अधीर होकर) अब और आप क्या कहना चाहते हैं?

दीवान— (हाथ जोड़कर) महाराज! राजनीति से काम लेना

चाहिए ? बादशाह से विचारने के लिए दो महीने का अवसर लेना ठीक होगा।

राजा— पर मुझे तो कुछ सोचना-विचारना नहीं है।

दीवान— फिर भी महाराज ! दास की प्रार्थना है। दो मास में हम कुछ युक्ति सोच लेंगे, जिससे आगे को बचत निकलने का कुछ सुभीता निकल आएगा।

राजा— अच्छा, ऐसा ही कीजिए !

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर का राजमहल : महाराणा और कुंवर जयसिंह तथा भीमसिंह : समय—रात्रि]

राणा— कौन हैं वे ?

कुंवर जयसिंह—गोवर्धन के गुसाईं हैं। उनके साथ श्री द्वारिकाधीश और श्रीनाथजी की मूर्ति है। महाराज ! वे सब ओर से निराश होकर आपकी शरण आए हैं।

राणा— पापी बादशाह ने क्या देवमन्दिरों को भी विध्वंस करा डाला है ?

भीमसिंह—जी हाँ, उसके सैनिक राज्य भर के मन्दिरों को ढहा रहे हैं। काशी विश्वनाथ के मन्दिर को ढहाकर

उसने मस्जिद बनवा ली है।

राणा— तो भारतवर्ष के हिन्दू इतने पतित हो गए हैं कि चुपचाप सहन करते हैं। क्या उनकी रगों में रक्त नहीं है ?

कुँवर जयसिंह—यही नहीं! उसने जजिया भी लेना शुरू कर दिया है।

राणा— यह तो अत्यन्त अपमानजनक है। हिन्दुओं ने इसका भी विरोध नहीं किया ?

कुँवर जयसिंह—किया था, इस अन्याय के विपरीत अर्ज गुजारने दिल्ली के हिन्दू जामा मस्जिद के आगे जमा हुए थे, बादशाह ने उन्हें हाथी से कुचलवा दिया।

राणा— (उत्तेजित होकर) हाथी से कुचलवा दिया ! दिल्ली के दरबार में इतने हिन्दू राजा हैं, किसी ने कुछ नहीं किया ?

भीमसिंह—कुछ नहीं किया महाराज ! किसी ने चूँ तक न की।

राणा— हाय रे भारत के हिन्दुओं के दुर्भाग्य ! गुसाईं कहाँ २ गए थे ?

भीमसिंह—महाराज ! वे बूँदी, कोटा, पुष्कर, किशनगढ़ और जोधपुर गए थे, पर औरंगजेब के भय से किसी ने मूर्ति को आश्रय नहीं दिया। अब गुसाईं सब ओर से निराश हो मेवाड़ की शरण आए हैं।

राणा— मेवाड़ में शरणागत अभय है। उन्हें कहो—मेरे

एक लाख राजपूतों के सिर काटने पर औरंगजेब मूर्तियों के हाथ लगा सकेगा। श्रीनाथजी की मूर्ति की प्रतिष्ठा सीहाड़ में और श्री द्वारकाधीश की मूर्ति की प्रतिष्ठा कांकरौली में करा दी जायगी। मूर्ति की पूजा भोग के लिए समुचित गाँवों की व्यवस्था कर दी जायगी। तुम दोनों भाई मूर्तियों को आदर-मान से राज्य में ले आओ।

भीमसिंह—जो आज्ञा।

[जाता है]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—रूपनगर का अन्तःपुर : समय—रात्रि : राजकुमारी चारुमती एकान्त में राजसिंह की तस्वीर गोद में लिए बैठी गा रही हैं]

पाहुन पलकों में बस जाना।
नेह नीर दृग छलक रहे अब।
गीले नैन पखारेंगे पद।
मूक प्रतीक्षा अश्रु त पदध्वनि,
इस जीवन के ओर-छोर तक—
अविकल चल तक आ जाना।
पाहुन पलकों में बस जाना।
अमित तुम्हारी स्मृति ही का धन,

सदा रही आँचल में बाँधे।
अपने में खोई-सी बैठी—
इस सूने मन्दिर में आकर—
पीछे मत फिर जाना।
पाहुन पलकों में बस जाना।

[तस्वीर को एकटक निहारती है]

चारुमती— प्रभात के सूर्य की किरणों की भाँति तुमने मेरे हृग की अँधेरी कन्दरा में प्रवेश किया और उज्ज्वल आलोक बिखेरा। आशा का एक तार मुझे तुम तक खींचे लिए जा रहा है। (देखकर) तुम्हारी स्मृति कितनी मधुर, तुम्हारा चिन्तन कैसी तपस्या, तुम्हारा गुणगान कैसा आल्हादकारक है। हे वीर, हे पौरुष के अवतार, यह क्षत्रिय बाला आज अपने नारी जीवन को तुम्हारे अर्पण करती है। (तस्वीर पर माथा टेकती है। अकस्मात् निर्मल आती है)।

निर्मल— अरे! यहाँ यह क्या हो रहा है?

चारुमती—(तस्वीर छिपाकर) कहाँ? कुछ भी तो नहीं।

निर्मल— यह चोरी और सीनाजोरी। अच्छा, कुछ भी नहीं सही।

[मुँह फुलाकर चल देती है]

चारुमती—रूठ गयी क्या? अच्छा सुन, मैं...जरा कुछ सोच रही थी।

निर्मल— क्या सोच रही थीं राजकुमारी ?
चारुमती—यही कि (सिटपिटाकर) कि...क्या बताऊँ ।
निर्मल— नहीं बता सकोगी। बहाना बन सका ही नहीं ।
चारुमती—तू क्या समझती है—बता ?
निर्मल— यही कि कुमारीजी कुछ सोच रही थीं ।
चारुमती—क्या सोच रही थी ?
निर्मल— मैं क्या जानूँ, आपके मन की बात ।
चारुमती—तू सब जानती है, बता ?
निर्मल— वह तस्वीर दीजिए, बताऊँ ।
चारुमती—(घबराकर) कौनसी तस्वीर ?
निर्मल— वही, जो अभी आपने छिपादी है और जिसे पलकों में बसा रही थी ।
चारुमती—(रुष्ट होकर) बड़ी दुष्ट है तू, दूर हो ।
निर्मल— जाती हूँ, महारानी से सब हकीकत कहे देती हूँ ।

[जाना चाहती है]

चारुमती—ठहर, सुन एक बात ।
निर्मल— जाने दीजिए–मैं जरा महारानी......
चारुमती—(हँसकर) मार खाएगी क्या ?
निर्मल— जी हाँ और खा ही क्या सकती हूँ ।
चारुमती—अच्छा सुन !
निर्मल— कहिए ।
चारुमती—(उदास होकर) कैसे कहूँ ?

निर्मल— मैं समझ गई। पर चिन्ता क्या है ?

चारुमती— (आँखों में आँसू भरकर) तूने सब बातें नहीं सुनीं।

निर्मल— कौन बातें ?

चारुमती— दिल्ली से दूत आया था।

निर्मल— देख चुकी हूँ, सुन भी चुकी हूँ।

चारुमती— अब क्या होगा ?

निर्मल— महाराज ने बादशाह से दो महीने की मुहलत मांगी है।

चारुमती— इसके बाद ?

निर्मल— इन्कार कर दिया जायगा।

चारुमती— इन्कार करने से क्या होगा, पलक मारते दल-बादल छा जाएँगे—रूपनगर की ईंट-से-ईंट बज जाएगी।

निर्मल— तो उपाय क्या है ?

चारुमती—उपाय है।

निर्मल— (हँसकर) समझी। पर आपको एक बात मालूम है ?

चारुमती— कौनसी बात ?

निर्मल— राणा से महाराज की शत्रुता है।

चारुमती— किस बात पर ?

निर्मल— महाराणा ने माण्डलगढ़ पर चढ़ाई करके उसे दखल कर लिया है। महाराज उन पर सेना भेजने की तैयारी में हैं।

चारुमती— दिनाजो, क्या उनसे लड़ सकेंगे ?

निर्मल— न लड़ सकें, वे भी वीर हैं। हारना भी तो वे न

सहन करेंगे। फिर माण्डलगढ़ उन्हें बादशाह ने दिया था—बादशाह उनकी मदद करेगा।

चारुमती— बादशाह ज्योंही जानेगा कि उसे डोला देने से इंकार कर दिया गया है, वह रूपनगर की ईंट-से-ईंट बजा देगा।

निर्मल— जब जो होगा, देखा जाएगा। हम स्त्री जाति कर भी क्या सकती हैं।

चारुमती— (आंसू भरकर) राजपूतों की बेटियां इसी से तो पैदा होते ही मार डाली जाती हैं। जो बचती हैं, वे ऐसी सांसत भुगतती हैं।

निर्मल— कुमारीजी, व्यर्थ अपने मन को दुखी न करो, समय पर कुछ न कुछ होकर ही रहेगा। महाराज कुछ करेंगे।

चारुमती— मुझे धैर्य नहीं होता।

निर्मल— भगवान् सबके स्वामी, सबके रक्षक हैं। चलिए, सोइए! अधिक जागने से आपकी तबियत बिगड़ जाएगी। [दोनों जाती हैं]

[पर्दा गिरता है]

नवां दृश्य

[स्थान—उदयपुर का राजमहल : पाटवीकुमार जयसिंह का महल : जयसिंह की रानी—कमलकुमारी अपने कक्ष में सखियों सहित गा रही है। समय—प्रातःकाल]

मत देर करो सजनी अब झटपट नूतन साज सजाओ।
मेरे सूने मनमन्दिर में नूपुर सखी बजाओ।
नव वसन्त आया आली—फूलों से मुझे रिझाओ।
जीवन-तरंग की झूला में तुम झूलो, मुझे झुलाओ।
गाकर मधु गायन कोकिल स्वर में मृदु-वसंत बुलाओ।
प्यासे प्राणों को सखि छककर जीवनसुधा पिलाओ।
उर की दीपशिखा से जगमग अनगिन दीप जलाओ।

रानी— तारों से भरी इस रात में जीवन कैसा स्निग्ध मालूम होता है। प्राणों में मोहक स्नेह जैसे फूटा पड़ता हो। सखियो ! यह जीवन इतना सुन्दर क्यों है ?

एक सखी—इसलिए कि यह जीवन संसार का केन्द्र है।

रानी— सच है, जैसे प्रकृति में प्रभात, मध्याह्न, अपराह्न और सन्ध्या होती है, उसी प्रकार जीवन में भी। कहो तो, जीवन में कौनसा क्षण सबसे सुन्दर होता है।

एक सखी—प्रभात, जहाँ आकांक्षाओं की कोमल कलिकाएँ अविकसित रहती हैं। प्रातःकालीन मन्द समीर की भाँति जहाँ सरल-शुद्ध प्रेम की भीनी महक हृदय को विकसित करती रहती है। जहाँ चिन्ता की धूल-गर्द नहीं, अधिकार-मद की दुपहरी नहीं, जहाँ केवल उन्मुक्त चितवनियों की-सी उड़ान है, जहाँ उषा की

सुनहरी किरणों की भाँति मनोरम अल्हड़पन है। जीवन का वह प्रभात कैसा सुन्दर-कैसा प्रिय-कैसा पवित्र है सखी !

दूसरी— सचमुच ! परन्तु यौवन जीवन की दुपहरी है। उसमें जब वासना की प्रचण्डता आती है—तो फिर संसार का कुछ और ही रूप दीखने लगता है। उसका एक अलग ही सौन्दर्य है, जहाँ तेज है, ताप है, उत्कर्ष है और शक्ति का समुद्र है।

रानी— परन्तु उस प्रखर सौन्दर्य में भी एक भीषण वस्तु तो दुर्दम्य वासना का ज्वार है। उसे यदि सीमित रखा जाय तो यौवन जीवन का सर्वोत्कृष्ट भाग है। नहीं तो पतन का सरल मार्ग।

दूसरी सखी—देवी मध्याह्न के बाद प्रखर तेजवान् सूर्य का पतन तो होना ही है।

रानी— उसे पतन क्यों कहती हो सखी ! विकास की एक सीमा है। तुम क्या कहना चाहती हो कि जीवन में प्रखरता बढ़ती जाय। फिर तुम्हें मालूम है— पृथ्वी गोल है, सूर्य के चारों ओर धरती घूमती है। अविरल गति से प्रकृति का यह क्रम चल रहा है। सखी, जिसे हम प्रभात-मध्याह्न-सायंकाल और रात्रि कहते हैं, वह सत्य कुछ नहीं, परिस्थितियों का परिवर्तन है। प्रकृति तो एकरस-एकभाव से अप्रतिहत .

गति से अपने मार्ग पर चल रही है।

तीसरी— तो फिर जीवन भी ऐसा ही रहा?

रानी— तब क्या? जीवन का जो केन्द्र बिन्दु है, वह तो न कभी बालक होता है, न वृद्ध, न उसमें वासना उद्दीप्त होती है, न शमन। यह सब तो भौतिक परिवर्तन हैं। उसी प्रकार, जैसे सूर्य न कभी अस्त होता है न उदय। वह तो ध्रुव रूप से अपने स्थान पर स्थिर होकर तेज बिखेरता है। विकल्प के नेत्र ही उसका उदय-अस्त देख पाते हैं।

दूसरी सखी—तब तेजस्वी पुरुषों का भी यही हाल है। बाह्य दृष्टि से जो उनका उत्थान-पतन दीख पड़ता है, वह सब विकल्प है? वे हर हालत में वैसे ही तेज और शक्ति के अधिष्ठाता रहते हैं।

रानी— निश्चय ही! (हँसकर) परन्तु सखियो! हम लोग तो आनन्द-विलास-हास करती-करतीं तात्विक विवेचना में लग गईं। (देखकर) लो, महाराज आ रहे हैं।

[कुमार जयसिंह आते हैं। सब सखियाँ अदब से हट जाती हैं]

रानी— (हँसकर) आज आपके आखेट का दिन है न?

जयसिंह— है तो।

रानी— कहाँ, तैयारी तो कुछ नहीं दीख पड़ती।

जयसिंह— (हँसकर) सोचता हूँ, तुम्हारे इस प्रेमप्रमाद को छोड़

कर कहाँ जाऊँ। जाने दो, आज मेरा नहीं, तुम्हारे आखेट का दिन रहे।

रानी— यह कैसे स्वामिन् !

जयसिंह— (हँसकर) बिल्कुल सीधी बात है प्रिये ! मैं तो तुम्हारा सर्वसुलभ आखेट हूँ।

रानी— सच ? पति क्या स्त्रियों के सुलभ आखेट हुआ करते हैं, खासकर क्षत्रिय पति ?

जयसिंह— मैं तो यही समझता हूँ। पुरुषों का शिकार स्त्रियाँ अनायास ही कर डालती हैं। स्त्रियों के नयन बाणों से......

रानी— छीः स्वामी ! वीर राजपूत भी यदि कामिनी के नयनबाण के आखेट हुए तो फिर वे देश पर, धर्म पर, जाति पर जीवन को उत्सर्ग कैसे कर सकेंगे ?

जयसिंह— उत्सर्ग ? जीवन की इस मध्यावस्था में ? तुम्हीं तो कहा करती हो कि जीवन कैसा सुन्दर है, कैसा मनोरम है, कैसा बहुमूल्य है।

रानी— तभी तो जीवन उत्सर्ग का माहात्म्य है। सड़ी-गली चीजें तो लोग यों ही फेंक देते हैं, प्रियतम चीज को उत्सर्ग करना सबसे बड़ा त्याग है।

जयसिंह— प्रियतम चीज को उत्सर्ग करना ?

रानी— क्यों नहीं, फूल खिलता है, जब वह धीरे २ विकसित होता है, कैसा सौन्दर्य बखेरता है ? जब वह पूर्णरूप

से विकसित हो जाता है, उसमें सौरभ का समुद्र प्रवाहित होता है। वही उसके उत्सर्ग का समय है। उसी समय उसे भट्टी में डालकर इत्र खींच लेना चाहिए। नहीं तो......

जयसिंह— नहीं तो ?

रानी— (करुण स्वर में) वह मुर्झाकर सूख जायगा, उसकी पंखुड़ियाँ झड़ जाएँगी और उसका जीवन व्यर्थ होगा। अस्तित्व नष्ट होगा।

जयसिंह— मनुष्य का जीवन भी ऐसा ही है कुन्द, तुम यह कहाना चाहती हो ?

रानी— हाँ स्वामी, और राजपूतों का सबसे अधिक।

जयसिंह— क्यों ?

रानी— त्याग श्रेष्ठ है, यह सब कहते हैं। पर प्राण-त्याग सबसे श्रेष्ठ है और वह क्षत्रिय युद्ध में त्यागते हैं। इसलिए संसार में सबसे श्रेष्ठ त्यागी क्षत्रिय हैं।

जयसिंह— यह हुआ क्षत्रिय पुरुष का धर्म, अब क्षत्रियबाला की बात भी कहो।

रानी— वह उस विकसित फूल की सुगन्ध है, फूल के जीवन के साथ उसके बाद भी सौरभ बिखेरना उसका काम है। फूल जब भभके में तपाया जाता है, तब भी वह अक्षुण्ण रहती है वह अमर है—अक्षय है। वह प्राणों से सीधा सम्बन्ध रखने वाली गन्ध है। फूल

के प्राणों का निचोड़ उसी में है, स्वामी !

जयसिंह— (निकट आकर) यह तुम्हारे भीतर कौन बोल रहा है प्रिये ! क्या तुम मेरी वही मुग्धा-सरला वाला कमल हो ? नहीं-नहीं, कोई देव-अंश तुम में है।

रानी— (हँसकर) है स्वामी, वह अंश राजपूतशक्ति का है। जो इस आपकी दासी के स्त्रीत्व से पृथक् उस पर शासन कर रहा है। यह नारी शरीर आपका दास है, पर वह राजपूतशक्ति नहीं।

जयसिंह— वह क्या है ?

रानी— वह तुम्हारी इस तलवार की धार से भी प्रखर है। घातक भी और रक्षक भी।

जयसिंह— जाने दो इसे, मुझे तुम्हारा स्त्रीत्व चाहिए। माधुर्य सौकुमार्य, कोमलता और भावुकता से ओतप्रोत।

रानी— नहीं स्वामी, उससे अधिक तुम्हें इस अधम नारी शरीर में बसी हुई राजपूतशक्ति की जरूरत है।

जयसिंह— (हँसकर) क्या घातक होने के कारण।

रानी— (हँसकर) नहीं रक्षक होने के कारण। स्वामी, आप महा तेजस्वी राणा राजसिंह के पाटवी पुत्र-मेवाड़ की यशस्विनी गद्दी के उत्तराधिकारी हैं।

जयसिंह— जानता हूँ। और यह भी कि शक्ति और प्रेम की देवी कमलकुमारी का पति भी। चलो अब !

रानी— (हँसकर) चलो !　　[दोनों जाते हैं]

[पर्दा गिरता है]

तीसरा अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—उदयपुर : देवी के मन्दिर के पार्श्व भाग में रत्नसिंह और उनकी भावी पत्नी राजकुमारी गुणसुन्दरी : समय—प्रात:काल]

रत्नसिंह— ठहरो राजकुमारी, मुझे तुमसे कुछ कहना है। क्या तुम जानती हो कि मैंने तुम्हें पूजा के बहाने यहाँ मिलने को बुलाया है।

राजकुमारी—जानती हूँ। परन्तु यह क्या उचित हुआ है? माता जी से मुझे झूठ बोलना पड़ा है।

रत्नसिंह— इसमें अनुचित क्या है? तुमसे मेरी मंगनी हुई है। तुम मेरी भावी पत्नी हो, मुझे तुमसे मिलने का अधिकार है।

राजकुमारी—कहिए, आपने मुझे क्यों बुलाया है?

रत्नसिंह— मुझे कुछ कहना है।

राजकुमारी—कहिए।

रत्नसिंह— इतनी जल्दी? यह तो असमंजस है, मुझे सोचना पड़ेगा।

राजकुमारी—तो फिर कभी कह लीजिएगा, अभी मैं जाती हूँ।

[जाना चाहती है]

रत्नसिंह— (रास्ता रोककर) बिना जवाब दिए न जा पाओगी कुमारी !

राजकुमारी—आप कुछ कहते भी हैं।

रत्नसिंह— कहता हूँ, सुनो।

राजकुमारी—कहिए।

रत्नसिंह— पिताजी महाराणा से रुष्ट होकर दिल्ली चले गए हैं।

राजकुमारी—सुन चुकी हूँ।

रत्नसिंह— वे जीते जी मेवाड़ आएँगे भी या नहीं, सन्देह है।

राजकुमारी—यह हमारा बड़ा दुर्भाग्य है। अब मैं जाऊँ ?

[जाना चाहती है]

रत्नसिंह— क्या बिना सुने ही ? वह बात....

राजकुमारी—कौन बात ? जल्द कहिए।

रत्नसिंह— कह तो रहा हूँ, पर भागोगी तो कैसे कहूँगा ?

राजकुमारी—सखियाँ मन्दिर में बाट देख रही हैं।

रत्नसिंह— वे पूजा कर रही हैं। घन्टा-आरती की आवाज नहीं सुनती ?

राजकुमारी—अब जाऊँ मैं।

रत्नसिंह— (कृत्रिम कोप से) जो तुम्हें मुझ से इतना विराग है तो जाओ, फिर मत सुनो—मैं भी देश छोड़ दूँगा।

[जाना चाहता है]

राजकुमारी—(अधीर होकर) सुनिए ! आप क्या कहना चाहते हैं । कहिए न ?
रत्नसिंह— मैं भी पिताजी की भाँति मेवाड़ त्याग दूँगा ।
राजकुमारी—किसलिए ?
रत्नसिंह—क्या करूँ, जब कोई मेरी बात ही नहीं सुनता ।
राजकुमारी—सुनती तो हूँ, कहिए !
रत्नसिंह— हाँ तो......सोचता हूँ, कहूँ कि न कहूँ । जाने दो, नहीं कहता ।
राजकुमारी—कहिए-कहिए !
रत्नसिंह— फिर कभी सुन लेना—अभी तुम्हें देर हो रही है ।
राजकुमारी—आप कहिए !
रत्नसिंह— सखियाँ बाट देख रही होंगी ।
राजकुमारी—हाथ जोड़ती हूँ—कहिए !
रत्नसिंह— (हँसकर) माताजी नाराज होंगी ।
राजकुमारी—(झुँझलाकर) कहीं युद्ध न होगा । आप कहिए तो !
रत्नसिंह— तब सुनो—मन लगाकर, ध्यान से ।
राजकुमारी—सुन तो रही हूँ ।
रत्नसिंह— हाँ, पिताजी तो दिल्ली चले गए । इसके बाद......
राजकुमारी—इसके बाद क्या ?
रत्नसिंह— बड़ी गम्भीर समस्या है—बड़ी टेढ़ी बात है ।
राजकुमारी—ऐसी क्या बात है ?

रत्नसिंह—अच्छा कहता हूँ—सुनो !

राजकुमारी—(हँसकर फिर लजाकर) अब और कैसे सुनूँ ?

रत्नसिंह—(निकट आकर) हमारा विवाह शीघ्र हो जाना चाहिए।

राजकुमारी—(लाज से सिकुड़कर) छी, यह भी कोई सुनने की बात है। (जाना चाहती है)

रत्नसिंह—(रास्ता रोक कर) कैसे नहीं है । क्या तुम यह बात सुनना नहीं चाहतीं ?

राजकुमारी—मैं क्या जानूँ । अब मैं जाती हूँ। (जाना चाहती है)

रत्नसिंह—(रास्ता रोक कर) जा न सकोगी। जवाब दो।

राजकुमारी—पिताजी से कहिए। परन्तु .....

रत्नसिंह—परन्तु क्या ?

राजकुमारी—बिना महाराज के आए .....

रत्नसिंह—विवाह कैसे होगा, यही न ?

राजकुमारी—हाँ, पिताजी ने प्रतिज्ञा की थी कि......

रत्नसिंह—कि वे अपनी पुत्री को मेरे पिताजी के हाथ सौंपेंगे। और उन्होंने प्रसन्नता से तुम्हें पुत्रवधू बनाना स्वीकार कर लिया था। अब वे क्या बिना पिताजी की उपस्थिति के ब्याह न करेंगे ?

राजकुमारी—मैं नहीं जानती, आप पिताजी से पूछिए । परन्तु क्या ऐसे समय में जब देश पर शत्रुओं की चढ़ाई का भय है, आपका विवाह की बातें करना उचित है ?

रत्नसिंह—तुमसे किसने कहा कि शत्रु की चढ़ाई का भय है।

राजकुमारी—सुनती हूँ। महाराणा के उद्योगों को दिल्ली का बादशाह सन्देह और भय की दृष्टि से देखता है और वह चाहे जब मेवाड़ पर आ धमकेगा।

रत्नसिंह—इसकी क्या चिन्ता है, वह जब भी मेवाड़ में आएगा यह तलवार उसका स्वागत करेगी (तलवार निकाल कर हवा में घुमाता है)।

राजकुमारी—एक अर्ज करूँ?

रत्नसिंह—कहो कुमारी!

राजकुमारी—नाराज न होना।

रत्नसिंह—कभी नहीं।

राजकुमारी—आप वीरपुत्र है। आपके पूज्य पिता महाराज ने बड़े-बड़े कारनामे किए हैं।

रत्नसिंह—और हमारे पूर्वजों की मर्यादा भी मेवाड़ में सर्वोपरि है। हम त्यागी चूंडाजी के वंशधर है, कुमारी!

राजकुमारी—आपके चरणों की दासी होना मेरा परम सौभाग्य है परन्तु ....

रत्नसिंह—परन्तु क्या?

राजकुमारी—मैं भी हाड़ी हूँ, कुमार! हाड़ाओं का वंश भी हेठा नहीं।

रत्नसिंह—हाड़ाओं के अमर कारनामे जगद्विख्यात हैं।

राजकुमारी—मेरी एक प्रतिज्ञा है।

रत्नसिंह— वह क्या ?

राजकुमारी—प्रण कीजिए कि आप पूरा करेंगे ।

रत्नसिंह— तुम मेरी भावी पत्नी हो कुमारी, तुम्हारी प्रतिज्ञा प्राण रहते अवश्य पूरी करूँगा ।

राजकुमारी—सुनकर परम सुख हुआ कुमार ! मेरी प्रतिज्ञा है, मैं वीर पुरुष की पत्नी बनूँगी ।

रत्नसिंह— तो क्या तुम्हें मेरी वीरता में सन्देह है ?

राजकुमारी—नहीं, पर मैं आँखों से देखना चाहती हूँ ।

रत्नसिंह— आँखों से देखोगी, हाड़ी राजकुमारी !

राजकुमारी—क्या रुष्ट हो गए राजकुमार, मूर्ख बालिका का अपराध क्षमा कीजिए ।

रत्नसिंह— (होंठ काटकर) अच्छी बात है कुमारी, वीरता का प्रमाण देकर ही मैं तुमसे ब्याह करूँगा ।

[तेजी से जाता है]

[पर्दा बदलता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—दिल्ली का शाही महल : बादशाह आलमगीर और उसकी बेटी जेबुन्निसा : समय—सन्ध्याकाल : महल का खुला हुआ सुसज्जित नजर बाग]

बादशाह— तो उस नगर का राजा मर गया ?

जेबुन्निसा—जी हाँ, जहाँपनाह ! उसके भतीजे रामसिंह ने अर्जी भेजी है कि वही रूपनगर की गद्दी का सही वारिस है। वह तख्ते मुग़लिया का वफादार और पुराना शाही खादिम है। उसे शाही फर्मान के जरिए रूपनगर का राजा तस्लीम करके सरफराज किया जाय।

बादशाह— मगर उसने उस अम्र का क्या जवाब दिया है ?

जेबुन्निसा—हुजूर, उसने कहलाकर भेजा है। उसकी नाचीज बहिन को अगर बादशाह बेगम बनने की खुशकिस्मती बख्शी जायगी तो वह उसके लिए फख्र की बात होगी। वह शाही रिश्तेदारी को अपने लिए इज्जत की चीज समझता है।

बादशाह— बहतर, कल उसके पास शाही सनद भेज दी जाएगी और वह रूपनगर का राजा तस्लीम कर लिया जाएगा। बदनौर और माण्डल के परगने भी उसे दे दिए जाएँगे। मगर शर्त यह है कि वह फौरन ही अपनी बहिन को दिल्ली रवाना कर दे।

जेबुन्निसा—हुजूर उसकी एक शर्त है।

बादशाह— वह क्या ?

जेबुन्निसा— वह चाहता है, हजरत सलामत खुद रूपनगर तशरीफ ले जाकर बाकायदा राजा की बेटी से शादी करके उसकी इज्जत अफजाई करें।

बादशाह— उसकी इस शर्त की क्या वजह है ?

जेबुन्निसा—हुजूर, वह चाहता है कि शाही रिश्तेदार होने से उसका रुतबा बढ़े, फिर हुजूर उसकी यह अर्जी कबूल फर्माएँगे तो एक ढेले से दो शिकार होंगे।

बादशाह—तुमने इस मामले में क्या मस्लहत सोची है।

जेबुन्निसा—जहाँपनाह को मालूम है कि मेवाड़ के राना की ज्यादतियाँ बढ़ती जाती हैं। उसने न सिर्फ शाही इलाके जबरन कब्जे में कर लिए हैं। बल्कि बागी जोधपुर की रानी को अपने यहाँ पनाह दी है और राठौरों से मिलकर वह तमाम राजपूताने में एक जबर्दस्त ताकत—तख्ते मुगलिया के खिलाफ खड़ी कर रहा है। सो हुजूर इस बार अगर रूपनगर जाएँगे तो राजा की ख्वाहिश भी पूरी होगी, राना को भी देख लिया जाएगा और हजरत मुइनुद्दीन की दरगाह शरीफ की जियारत भी हो जाएगी।

बादशाह—तुम्हारे खयालात काबिले गौर हैं। (कुछ सोचकर) बहतर, मैं उस राजा की अर्जी मंजूर करता हूँ। मैं आज ही फौजदार दिलेरखाँ और हसनअलीखाँ को ४० हजार फौज की तैयारी का हुक्म देता हूँ मगर...

जेबुन्निसा—अब जहाँपनाह किस बात पर गौर करने लगे ?

बादशाह—यही, कि क्या वह राजा की बेटी बादशाह की बेगम बनना पसन्द करेगी। तुमने कहा था न कि, उसने मेरी तस्वीर पर लात मारी थी।

जेबुन्निसा– जी हाँ हुजूर, वह बहुत ही मगरूर भी है।

बादशाह— और साथ ही आलमगीर को दिल से नफरत करने वाली भी।

जेबुन्निसा– उसकी यह मजाल ? एक मामूली काफिर जमींदार की बेटी की यह हिमाकत ? उसे पहिले गुस्ताखी की सजा दी जायगी।

बादशाह— (कुछ सोचकर) तुम उसके लिए क्या सजा तजवीज करती हो जेबुन्निसा ?

जेबुन्निसा– अब्बा जान ! अगर उस गंवारिन के दिमाग में जरा भी मगरूरी पाई गई तो उसे कुत्तों से नुचवा डालूंगी।

बादशाह— (मुस्करा कर) और उसके बाद ?

जेबुन्निसा– उसके बाद अब्बा......

बादशाह— मगर मेरी प्यारी बेटी ! किसी लड़की को बादशाह की बेगम बनाना और कुत्तों से नुचवाना एक ही चीज तो नहीं।

जेबुन्निसा– जहाँपनाह......

बादशाह— ठहरो शहजादी, मैं इस मामले पर गौर करूंगा। अब मैं जाता हूँ। तुम्हें भी इस शादी में मेरे हमराह चलना होगा।

जेबुन्निसा– जैसी जहाँपनाह की मर्जी।

[जाता है]

जेबुन्निसा—समझी, उस गरूर की पुतली गँवारिन के लिए मालूम होता है, अब्बा के दिल में कहीं किसी कोने में मुहब्बत छिपी है। मगर देखा जाएगा। यह आरमिनियन बाँदी तो अब नहीं सही जाती! (कुछ सोचकर) कोई है?

एक बाँदी—(हाथ जोड़कर) हुक्म खुदावन्द!

जेबुन्निसा—शराब।

बाँदी— जो हुक्म। [अदब से झुककर जाती है]

जेबुन्निसा—खुदा ने चाहा तो हिन्दुस्तान पर फिर एक नूरजहाँ हुकूमत करेगी। (बाँदी शराब लाती है, शराब को प्याली में डालकर पीती हुई) यह नूरजहाँ मैं हूँ। (प्याला फर्श पर फेंकती हुई बाँदी से) इधर आ!

बाँदी— (हाथ जोड़कर) लौंडी को क्या हुक्म होता है?

जेबुन्निसा—तुझे हमारी खूबसूरती पसन्द है?

बाँदी— बल्लाह सरकार, शाही हरम में लामिसाल हैं।

जेबुन्निसा—(हँसती हुई) सच?

बाँदी— बखुदा।

जेबुन्निसा—हजरत नूरजहाँ से भी ज्यादा।

बाँदी— (जमीन चूमकर) हुजूर जमीं का चाँद हैं।

जेबुन्निसा—(शराब भरकर एक ही घूंट में पीकर बाँदी पर प्याला फेंककर) भाग यहाँ से हरामजादी।

[बाँदी आदाब बजाती भाग जाती है]

जेबुन्निसा—(कुछ धार ही धार) जमीन का चाँद तो हूँ ही, जैसे चाँद में धब्बे होते हैं, उसी तरह मेरे अन्दर भी धब्बे हैं। मगर इससे क्या ? मैं आलमगीर बादशाह की बेटी, मुगल हरम की रानी और आलमगीर की प्यार की पुतली हूँ। अब्बा, जिन्होंने रहम सीखा ही नहीं, जो भूखे काठ की तरह महज बादशाह नजर आते हैं, इस जेबुन्निसा को दिल से प्यार करते हैं, मगर उस प्यार में हिस्सा बटाने वाली वही आर-मिनियन बाँदी है जिसे कुर्दा फरोशों से दारा ने खरीद लिया था और अपने नफस का शिकार बनाया था—वही बेगैरत और बे-अस्मत औरत बद-किस्मत दारा के कत्ल होने पर अपने आका और खाविंद के कातिल आलमगीर की बाँदी बनने को झट तैयार हो गई। तुफ! और आज वह अपनी खूबसूरती की वजह से बादशाह की बेगम बनकर शाही रंगमहल को अपने ही मदल में रखना चाहती है। अब्बा उसके सामने जाने पर जैसे आलमगीर ही नहीं रहते। एक फर्माबर्दार खाविंद बन जाते हैं—वह बाँदी उनके सामने शराब पीती है और अब्बा उसके साथ ऐयाशी की दरिया में अपनी तमाम शानोशौकत और बादशाहत जैसे डुबो देते हैं। (कुछ धुर रहकर होंठ काटती हुई) मगर मैं वह

नहीं बर्दाश्त कर सकती। अब्बा को उस नागिन के चपेट से बचाना होगा और उसके लिए यह एक रास्ता है। वह भोली-भाली गँवार हिन्दू लड़की दिल से बादशाह को नफरत करती रहेगी और अब्बा उससे अपनी बादशाही तबियत की बची-खुची मुहब्बत से उलझते रहेंगे। उधर मैं रंगमहल पर अपना अटल रंग जमाऊँगी। (एक भरपूर शराब का प्याला पीकर मसनद पर लुढ़क जाती है)।

[पर्दा गिरता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—रूपनगर का महल : राजा रूपसिंह की विधवा रानी और राजा रामसिंह बातें करते हैं]

रानी— क्या तुमने दिल्ली के बादशाह को चारु का डोला देना मंजूर कर लिया है।

रामसिंह—आपसे किसने कहा रानी माँ!

रानी— मैं पूछती हूँ कि क्या यह सच है?

रामसिंह—अगर सच हो तो?

रानी— और यह भी सच है कि शाही सेना राजकुमारी का डोला लेने को दिल्ली से चल पड़ी है।

रामसिंह— बादशाह सलामत खुद राजकुमारी से शादी करने बारात सजाकर आ रहे हैं। भला यह इज्जत किसी और राजा को भी नसीब हुई थी।

रानी— तुमने मेरी बिना आज्ञा ऐसा क्यों किया ?

रामसिंह— मैं राजा हूँ। राजकाज के मामलों में किस-किस बात की आज्ञा ली जाएगी ?

रानी— बिटिया का ब्याह कोई राजकाज है ?

रामसिंह— बादशाह से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक बात राजकाज है।

रानी— तुम्हें स्वर्गीय महाराज की इच्छा मालूम है ?

रामसिंह— उनकी बातें उनके साथ गईं।

रानी— उनकी आज्ञा के विरुद्ध कुछ न हो सकेगा।

रामसिंह— अब तो मेरी ही आज्ञा के अनुसार सब काम होंगे। मैं राजा हूँ।

रानी— यह न होने पाएगा।

रामसिंह— यही होगा।

रानी— मैं आज्ञा देती हूँ।

रामसिंह— यह मेरा काम है, आपका नहीं। आप महल में बैठकर पूजा-पाठ, दान-धर्म कीजिए।

रानी— तो तुमने राजकुमारी का डोला बादशाह को देने की सोचली है।

रामसिंह— निश्चय ! यह तो बहुत मामूली बात है। इसके

सिवा बड़े भारी लाभ की भी।

रानी— मामूली बात है, क्यों ? सुनूँ तो जरा।

रामसिंह— सुनने की क्या बात है। सभी राजाओं ने अपनी बेटियाँ शाही हरम में दी हैं। रानी माँ, हमारी बहन बादशाह की बेगम बनेगी, यह जानकर तुम्हें खुशी होना चाहिए।

रानी— खुशी होना चाहिए ? क्यों ?

रामसिंह— इसलिए कि बादशाह के रिश्तेदार बनकर हमारा राज्य और पद-मर्यादा बढ़ेगी। दिल्ली के दरबार में हमारा ही सितारा चमकेगा। बादशाह ने वे सब इलाके हमें दे दिये हैं जो उदयपुर के राना ने हमसे छीन लिए थे। शाही फौज जल्द उन्हें दखल करके हमारे सुपुर्द कर देगी।

रानी— धिक्कार है तुमको ! तुम यह न कर पाओगे रामसिंह !

रामसिंह— (क्रोध से) कोई भी शक्ति रूपनगर के राजा को नहीं रोक सकेगी।

रानी— तो तुम बलपूर्वक यह कुकर्म करोगे ?

रामसिंह— मैं अपने राजापने के अधिकार काम में लूँगा।

रानी— कुमारी की मर्जी के विरुद्ध ?

रामसिंह— वह अल्हड़ लड़की अपना गुण-दुःख क्या जाने ?

रानी— मेरी मर्जी के विपरीत ?

रामसिंह— मेरी सलाह है कि आप इन पचड़ों में न पड़ें। दान-धर्म......

रानी— स्वर्गीय महाराज की इच्छा ?

रामसिंह— वह भी स्वर्ग सिधारी।

[तेजी से चारुमती आती है]

चारुमती— तुम यह न कर पाओगे भैया !

रामसिंह— बेसमझ लड़की ! बादशाह की बेगम बनने के बाद......

चारुमती— मैं जान पर खेल जाऊँगी। पर देश और धर्म के शत्रु को आत्मार्पण न करूँगी।

रामसिंह— (हँसकर) दिल्ली के रंगमहल के वैभव देखकर सब भूल जाओगी, बहन ! मगर याद रखना जिस भाई की बदौलत यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उसे ऐश्वर्य मद में न भूल जाना।

चारुमती— (होंठ काटकर) मैं क्षत्रिय बाला हूँ ?

रामसिंह— और मैं क्षत्रिय राजा हूँ।

चारुमती— तुम क्षत्रियाधम हो।

[तेजी से जाती है]

[पर्दा गिरता है]

चौथा दृश्य

[स्थान—रूपनगर का महल : कुमारी चारुमती और उसकी सखी निर्मल : समय—प्रातःकाल]

निर्मल— अब उपाय ?

चारुमती— उपाय तेरा सिर।

निर्मल— अच्छी बात है, दिल्ली मैं भी चलूँगी।

चारुमती— किसलिए ?

निर्मल— देखूँगी, राजपूत की लड़की कैसे उस हत्यारे बादशाह की बेगम बनकर कोर्निस करेगी।

चारुमती—उस दिन मैंने उसकी तस्वीर पर लात मारी थी।

निर्मल— मारी तो थी।

चारुमती— उस लात से उसकी नाक टूट गई थी।

निर्मल— शायद टूट गई थी।

चारुमती— दिल्ली चलकर मैं अपनी उसी लात से आलमगीर के खास रंगमहल में ही उसकी नाक तोड़ूँगी।

निर्मल— तोड़ सकोगी ?

चारुमती— राजपूत की बेटी की लात है यह !

निर्मल— है तो, परन्तु लात से नाक ही तोड़नी है, तो एक उपाय करना होगा।

चारुमती—कौन उपाय ?

निर्मल— वही मेरा सिर।

चारुमती— तेरा सिर ? क्या वह भी तोड़ना-फोड़ना होगा ?

निर्मल— अभी नहीं । अभी तो उससे काम लेना होगा । इसके बाद फिर यदि आवश्यकता हुई तो राजपूत की बेटी की लात तो कहीं गई नहीं ।

चारुमती— बात कह, बकवास न कर ।

निर्मल— राजकुमारी, क्या सचमुच, तुम उस पापस्थली-दिल्ली के रंग-महल में जीते जी प्रविष्ट होना चाहती हो ?

चारुमती— (आँसू भरकर) और करूँगी भी क्या ? एकबार भारतेश्वरी बनकर देखूँ ।

निर्मल— हँसी न करो, आज से नवें दिन शाही फौज यहाँ आ पहुँचेगी ।

चारुमती— तब मैं दिल्ली जाऊँगी ।

निर्मल— तुम ?

चारुमती— नहीं तो रूपनगर की ईंट-से-ईंट बज जाएगी ।

निर्मल— क्या राजहंसनी बगुले की सेवा करेगी ? क्या सिंहनी गीदड़ को वरेगी ?

चारुमती—ऐसा कभी न होगा, सखी !

चारुमती— कहा तो, वहां पहुँचकर उस बन्दरमुँहे मुसलमान की नाक इस हाथ से तोड़ूँगी ।

निर्मल— यह कर सकोगी ?

चारुमती—न कर सकूँगी, तो यह अंगूठी है ।

निर्मल— क्या विष पीकर मरोगी ?

चारुमती— राजपूतानी फिर पैदा ही किसलिए होती हैं।

निर्मल— (क्रोध से) कुत्ते की मौत मरने के लिए ! पर कहे देती हूँ, यह न होने पाएगा।

चारुमती— तब ?

निर्मल— एक उपाय है।

चारुमती— क्या उपाय है ? है कोई ऐसा धीर-वीर जो क्षत्रिय कुमारी की लाज रखे और दिल्लीपति के साथ रार ठाने ? सभी तो राजपूत कुलकलंक मुगल बादशाहों के गुलाम हो गए हैं।

निर्मल— अब भी धरती वीर शून्य नहीं हो पाई है, सखी ! भगवती वसुन्धरा जब वीरों का जनना बन्द कर देगी तो प्रलय हो जाएगी।

चारुमती— हाय ! इस मुगलवंश के राहु ने राजपूतों के एक-एक वंश को ग्रस लिया है। राजपूत-बाला अब किसकी शरण जाए ?

निर्मल— मेवाड़ के महाराणा राजसिंह की, जिनकी वीर-मूर्ति तुम्हारे मन में बसी है, जिनकी तलवार अजेय है, जिनकी नसों में धीरवर प्रताप और साँगा का रक्त बहता है, वह निर्भय सिंह मुगल-शक्ति से भय नहीं खाता। अब तुम शील-संकोच छोड़कर रुक्मणी बनो सखी ! राजसिंह को पत्र लिखो।

चारुमती— उनकी मैं पूजा करती हूँ। पर मैंने क्या ऐसी तपस्या की है कि उनकी चरणदासी बन सकूँगी।

निर्मल— (हँसकर) चरणदासी बनने की बात पीछे सोची जायगी, अभी तो यही लिखो कि एक राजपूत बाला आपकी शरण है, उसके धर्म की रक्षा कर सको तो करो।

चारुमती— ऐसी बेहयाई का काम मैं न कर सकूँगी। मैं उन्हें पत्र कैसे लिख सकती हूँ?

निर्मल— विपत्ति में मर्यादा नहीं रहती, सखी! मैं कहती हूँ सो करो—राजा को पत्र लिखो। आज ग्यारस है। ब्याह की तिथि पंचमी है। ६ दिन का अवसर है। चेष्टा करने पर इस अवधि में सन्देश पहुँच सकता है।

चारुमती— पर यह सन्देश ले कौन जायगा?

निर्मल— राजपुरोहित अनन्तमिश्र को ठीक कर चुकी हूँ। वे बड़े धर्मात्मा और राजपरिवार के सुविश्वासी हैं।

चारुमती— वे यह कठिन काम कर सकेंगे?

निर्मल— अवश्य करेंगे।

चारुमती— अच्छा! पत्र पाकर भी तो राणाजी ने मेरी रक्षा करना न स्वीकार किया तो? मेरी रक्षा करना—अपना सर्वनाश करना है। कौन एक बालिका के लिए अपने राज्य पर विपत्ति लाएगा।

निर्मल— सखी, जिस वीर की तुम पूजा करती हो वह क्या इतना कायर है कि शरणागत को अभय न करे और वह शरणागत भी एक निरीह राजपूत कन्या हो (मुस्करा कर धीरे से) और मन-ही-मन उन्हें वरण कर चुकी हो।

चारुमती— (हँसकर) दुष्टता न कर। पर पत्र लिखूँ कैसे?

निर्मल— ठहरो! मैं अनन्तमिश्र को बुलाने किसी को भेजती हूँ और पत्र लिखने की सामग्री लाती हूँ।

[जाती है]

चारुमती—(रोती हुई) मैं वह विषैला फूल हूँ जिसे सूँघने से मनुष्य की मृत्यु होती है। न जाने यह अभागिनी कितने वीरों का काल-रूप लेकर जन्मी है। क्यों मैं वीरवर को जोखिम में डालूँ? क्यों न आत्मघात कर प्राण दे दूँ। (रोती है)

[निर्मल आती है]

चारुमती— सखी, मेरा मरना ही अच्छा है।

निर्मल— आवश्यकता होगी तो वह भी हो रहेगा, सखी! वह तो हमारे बाएँ हाथ का खेल है। पर तुम्हें तो बादशाह आलमगीर की नाक लात से तोड़नी है। अभी उसका उपाय हो। मैं भी जरा यह तमाशा देखूँगी। लो, पत्र लिखो!

चारुमती— कैसे लिखूँ?

निर्मल— तुम लिखो, मैं बोलती हूँ।

चारुमती— नहीं, तू ही लिख!

निर्मल— (हँसकर) आज तो तुम्हीं लिखो, फिर कभी होगा तो मैं लिख दूँगी।

चारुमती— मर (कलम कागज लेकर) बोल!

निर्मल— लिखो प्रियतम प्रा......

चारुमती— (कलम कागज लेकर) मार खाएगी, तू! जा, मैं नहीं लिखती।

निर्मल—(हँसती हुई) तब फिर अपनी मर्जी से लिखो।

चारुमती— लिखने का कुछ काम नहीं है। भाग्य में जो होगा, हो जायगा।

निर्मल— अच्छा लिखो—महाराजाधिराज!

चारुमती— (लिखकर) आगे बोल।

निर्मल— आप राजपूत कुल शिरोमणि हैं और मैं एक विपद-ग्रस्त राजपूत बाला। पत्रवाहक मेरे गुरु हैं। मेरे दुर्भाग्य से दिल्लीपति मुझ अभागिन को अपनी बेगम बनाना चाहता है, उसकी सेना मुझे लेने आने ही वाली है। यद्यपि अनेक राजपूत कन्याओं ने मुगल बादशाहों के पर्यंक शोभा बढ़ाई है......

चारुमती— (रुककर) नहीं, यह ठीक नहीं।

निर्मल— (कुछ सोचकर) तब यह लिखो—मैं प्राण दूँगी पर मुगलों की दासी न बनूँगी। (सोचकर) इसका

कारण अभिमान नहीं–धर्म है। आप प्रतापी राजाधिराज एवं समस्त राजपूतों के अधिपति और धीर-वीर हैं, सो मैं आपकी शरणागत हूँ।

चारुमती— बस इतना ही काफी है।

निर्मल— एक बात और—अब आप अपना धर्म निबाहिए।

चारुमती— (लिखकर) बस।

निर्मल— बस, अब दस्तखत कर दो। हाँ, क्या हानि है यदि बादशाह की नाक लात से तोड़ने की बात भी लिख दो जाय ? यह भी राजपूतबाला की प्रतिज्ञा है—महाराणा को उसका भी निबाह करना होगा।

चारुमती— (मुस्कराकर) देख, गुरुजी आए हैं या नहीं। ऐसी बात भी क्या लिखी जाती है !

[एक दासी आती है]

दासी— गुरुजी आए हैं।

निर्मल— उन्हें यहाँ भेज दे। (चारुमती से) अच्छा, अब मार्ग का क्या प्रबन्ध किया जाय ! गुरुजी वृद्ध हैं। परन्तु...... खैर।

[गुरुजी आते हैं]

अनन्तमिश्र—(आशीर्वाद देकर) मुझे किसलिए बुलाया है, बेटी !

निर्मल— निमन्त्रण है महाराज, बहुत से मालटाल खाने को मिलेंगे, साथ में स्वर्ण दक्षिणा भी।

गुरुजी— (हँसकर) अरी लक्ष्मी बेटी, यहाँ का अन्न खाते-खाते

बूढ़ा हो गया। अब इस ब्राह्मण को खाने-पीने का लोभ न दो। यहाँ क्या काम है ?

निर्मल— गुरुजी, आपने कुछ सुना है ? दिल्ली से दूल्हा आ रहा है।

गुरुजी— (उदास होकर) सुना है बेटी, पर उपाय क्या है। भारत के आकाश में से हिन्दुत्व का नक्षत्र अस्त हो रहा है।

निर्मल— गुरुजी, आपको कुमारी की रक्षा करनी होगी ?

गुरुजी— इस ब्राह्मण के प्राण जाने से कुमारी की रक्षा हो सके तो आनन्द ही है।

निर्मल— प्राणों के जाने की बात तो नहीं है, पर जोखिम तो है।

गुरुजी— क्या करना होगा, बेटी ?

निर्मल— उदयपुर जाना होगा।

गुरुजी— (हँसकर) समझा। शिशुपाल से बचाने के लिए रुक्मिणी का सन्देश कृष्ण को पहुँचाना होगा। अच्छा जाऊँगा, परन्तु कुछ खर्च-वर्च......

निर्मल— (मुहरों से भरी थैली देकर) यह लीजिए, खर्च के लिए। दक्षिणा पीछे।

गुरुजी— (थैली में से ४ अशर्फी निकालकर) इतनी बहुत है बेटी! जुबानी सन्देश देना होगा या कोई पत्र भी है।

निर्मल— पत्र है। (पत्र देकर) यह लीजिए और यह मोती

को माला। राणा जब पत्र पढ़ने लगें तो यह माला आप उनके गले में डाल दें। और सब कुछ आप पर प्रकट है ही—जैसे हो, राणा को राजी करलें।

गुरुजी— (हँसकर) अच्छा बेटी, अच्छा! तो अब मैं जाऊँ, राह लम्बी है।

निर्मल— और समय कम। आज ग्यारस है, व्याह की तिथि पंचमी है। आपको इससे पूर्व ही यहाँ लौट आना होगा।

गुरुजी— (चिन्ता करके) प्रभु की कृपा से ऐसा ही होगा। जाता हूँ बेटी!

निर्मल— जाइए!

[अनन्त मिश्र जाते हैं]

[पर्दा बदलता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर के राजा का सभा-भवन : महाराणा अपने दर्बारियों सहित गद्दी पर बैठे हैं। अनन्त मिश्र सामने खड़े हैं। समय—प्रातःकाल।]

राणा— तो आप सब सरदारों की क्या मर्जी है?

मोहकमसिंह शक्तावत—अन्नदाता, इसमें विचारने की क्या बात है? शरणागत राजपूत बाला को विमुख नहीं किया जा सकता।

को माला। राणा जब पत्र पढ़ने लगें तो यह माला आप उनके गले में डाल दें। और सब कुछ आप पर प्रकट है ही—जैसे हो, राणा को राजी करलें।

गुरुजी— (हँसकर) अच्छा बेटी, अच्छा! तो अब मैं जाऊँ, राह लम्बी है।

निर्मल— और समय कम। आज ग्यारस है, व्याह की तिथि पंचमी है। आपको इससे पूर्व ही यहाँ लौट आना होगा।

गुरुजी— (चिन्ता करके) प्रभु की कृपा से ऐसा ही होगा। जाता हूँ बेटी!

निर्मल— जाइए!

[अनन्त मिश्र जाते हैं]

[पर्दा बदलता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर के राजा का सभा-भवन : महाराणा सरदारों सहित गद्दी पर बैठे हैं। अनन्त मिश्र सामने खड़े हैं। समय—प्रातःकाल।]

राणा— तो आप सब सरदारों की क्या मर्जी है?

मोहकमसिंह शक्तावत—अन्नदाता, इसमें विचारने की क्या बात है? शरणागत राजपूत बाला को विमुख नहीं किया जा सकता।

सोलंकी दलपत—राजपूत की बेटी, हिन्दूपति राणा की शरण छोड़कर कहाँ जाएगी, महाराज !

महारावत हरिसिंह—हमारी तलवारों की धार में काफी पानी है, उसका स्वाद इस बार मुगल चखेंगे।

झाला मुलतानसिंह—सिंहनी जब सिंह का आश्रय लेती है तब गीदड़ों का उसे क्या भय है ?

सीसोदिया माधोसिंह—महाराज, इस विषय में सोच-विचार करना हमारे लिए अपमान की बात है।

राणा— वीर पुरुषो, आप लोगों ने अपने योग्य ही बात कही। आप लोग योद्धा हैं, क्षत्रिय हैं, सूरमा हैं। मरना-मारना ही सूरमा की शोभा है, और शरणागत की रक्षा करना प्रत्येक क्षत्रिय का धर्म है।

सब— (एक स्वर में चिल्लाकर) शरणागत अभय !

राणा— निस्सन्देह मेवाड़ की भूमि पर शरणागत अभय है। परन्तु भाइयो, राज-काज की बातें केवल वीरता से ही पूरी नहीं होतीं। उनके लिए राजनीति और आगे-पीछे की बातें भी सोचना राजा का धर्म है। यह तो ठीक है कि शरणागत राजपूत बाला के धर्म की रक्षा की जाय। परन्तु कैसे ? दिल्लीपति का कोप हमारे ऊपर बढ़ता ही जाता है। फरमान पर फरमान आते हैं और हम टाल-टूल करते जाते

है। जजिया के विरुद्ध हमने पत्र लिखकर बादशाह को नाराज कर दिया है। शाही मर्जी के विरुद्ध हमने चित्तौड़ की मरम्मत कराई और कई ठिकाने छीन लिए हैं। मथुरा से भागे हुए गुसाइयों को हमने शरण दी है। अब जो हम बादशाह की बेगम का हरण करेंगे तो निश्चय ही उसका हम पर पूरा कोप होगा, और वह दल-बल सहित हम पर चढ़ दौड़ेगा। तब क्या हम उसका मुकाबिला कर सकेंगे? मुझे तो ऐसा दीखता है कि शाही सेना क्षणभर में सारे मेवाड़ को आनन-फानन में तबाह कर देगी। हमारे गाँव लूटे और जला दिए जाएँगे। स्त्रियों को बे-आबरू किया जाएगा। लहलहाती फसलें नष्ट कर दी जाएँगी और मेवाड़ की वीर-भूमि अपने वीरों के रक्त से लाल हो जाएगी। मेवाड़ पर यह विपत्ति केवल एक बालिका के लिए लाना क्या बुद्धिमानी की बात होगी?

रावत केसरीसिंह—मर्जी पाऊँ तो अर्ज करूँ। सेवक की दृष्टि में कर्तव्य-पालन के लिए हानि-लाभ नहीं देखा जाना चाहिए। सिद्धान्त पर मर-मिटना वीरों की परिपाटी है। लोहू और लोहा, यही तो राजपूतों की सम्पत्ति है, और है मृत्यु उनका व्यवसाय। महाराज, इससे राजनीति हमें बचा नहीं सकती। रही आलमगीर

के आक्रमण की बात। सो महाराज, वह तो आज नहीं तो कल होगा ही। बादशाह बहाना खोज रहा है और मेवाड़ उसकी आँखों में शूल-सा चुभ रहा है। वह मेवाड़ को विध्वंस करेगा ही और एक बार हम उससे लोहा लेंगे ही। वह कल न सही, आज ही सही।

राणा— (मुस्करा कर) यह तो सत्य है। परन्तु अभी हमारी तैयारी में कमी है। अपनी तैयारी होने तक यथा-सम्भव युद्ध को टालना हमें उचित है।

कुंवर भीमसिंह—श्रीमानों की आज्ञा पाऊँ तो अर्ज करूँ। हम युद्ध को निमन्त्रण नहीं दे रहे। न किसी पर अत्याचार कर रहे हैं। हम केवल अन्याय और अत्याचार का विरोध कर रहे हैं। यह भी हम न करें तो हमारा राजपूत जीवन ही धिक्कार के योग्य है।

राणा— तो आप सब सरदारों की यह राय है कि राजकुमारी की प्रार्थना स्वीकार कर ली जाय।

सब— अवश्य।

राणा— चाहे भी जिस मूल्य पर।

सब— (तलवारें खींचकर) यह लोहा राजपूतों का धन है, इसी के मूल्य पर।

राणा— (तलवार मूंदकर) शरणागत अभय! ब्राह्मण, राज-

कुमारी से जाकर कह दो कि हम प्राण देकर उसकी रक्षा करेंगे।

अनन्त मिश्र—धन्य महाराणा, धन्य क्षत्रिय वीर, धन्य वीरेन्द्र (आगे बढ़कर मोतियों की माला राणा के गले में डालकर) आपकी जय हो! महाराज, राजकन्या तन, मन से आपको वरण कर चुकी है। यद्यपि रूपनगर का घराना आपके समक्ष अति साधारण है, फिर भी महाराज, वह पवित्र सोलंकियों की गद्दी है। उस कुल में अभी दाग नहीं लगा है। राजकन्या चारु-मती रूप-गुण-शील में सब भाँति श्रीमानों के योग्य है-अब आप चलकर राजकुमारी को विधिवत् व्याह कर अपनी सेवा में लें जिससे धर्मपूर्वक आप उसकी रक्षा के अधिकारी हों।

सब— साधु! साधु! यह प्रस्ताव बहुत उत्तम है।

राणा— (गम्भीरता से) परन्तु, ब्राह्मण देवता! क्या यह प्रस्ताव कुमारी ने विपत्ति में पड़ कर किया है?

अनन्त मिश्र—नहीं श्रीमान्! जिस वीर की यशोगाथा राजपूताने के घर-घर गाई जाती है, और जिनके प्रताप का डंका वीर-भूमि को जागृत कर रहा है, जो राजपूत जाति मुकुटरत्न हैं। उन्हें पाकर कौन बाला न धन्य होगी! महाराज, वह राजपूत बाला मन-वचन से आपकी महिषी हो चुकी थी। अब आप

। धर्मपूर्वक उसे अपनी

। इस सम्बन्ध में क्या मत

अन्नदाता ! राजकन्याओं को बनाना तो राजपूतों का सनातन राजकन्या अब श्रीमानों को छोड़

!

न रहकर) अच्छा, अब एक बात विचा-ह गई।

—यह क्या महाराज !

शाह अपनी ५० हजार सेना लिए रूपनगर की मारी को ब्याहने आ रहा है। अब हम रूपनगर जाएँ तो उदयपुर को अरक्षित नहीं छोड़ सकते और यदि हम सारी सेना लेकर भी जाएँ और शाही सेना से मुठभेड़ हो जाए और कदाचित हम काम आएँ तब राजकुमारी की रक्षा का क्या उपाय होगा। वह तो फिर भी बादशाह के हाथ पड़कर रहेगी।

माधवसिंह—हमें ऐसा उद्योग करना चाहिए कि बादशाह की सेना के रूपनगर पहुँचने के पहिले ही, हम रूपनगर से कुमारी का उद्धार करके लौट आएँ।

राणा— यह तो असम्भव है। आज चौदस है, पंचमी को विवाह का मुहूर्त्त है। हम यदि रात-दिन कूंच करें तो ४ दिन में पहुँच सकते हैं। परन्तु समस्त सेना को लेकर इस प्रकार धावा मारना हो ही नहीं सकता—रास्ता ऊबड़-खाबड़ और दुरूह है।

दीवान फतहसिंह—एक युक्ति है।

राणा— वह क्या ?

दीवान फतहसिंह—श्रीमान थोड़ी-सी सेना लेकर रूपनगर जाकर कुमारी को व्याह लावें और कोई वीर सरदार मेवाड़ी सेना को लेकर रूपनगर और दिल्ली-मेवाड़ के तिराहे पर शाही सेना को रोक रखे।

सब— यह युक्ति बहुत उत्तम है।

राणा— परन्तु कौन ऐसा वीर है—जो इतने अलपकाल में ऐसे संकट को सिर पर ले सकता है। (सब सन्नाटा मारते हैं)

राणा— क्या कोई वीर सरदार इस सेना की सरदारी स्वीकार कर सकता है।

[सब सन्नाटे में रह जाते हैं]

कुंवर भीमसिंह—(खड़े होकर) महाराज, यदि मेवाड़ में सभी सरदार वचन-शून्य हैं तो इस सेवक को आज्ञा...

रत्नसिंह— अन्नदाता की जय हो। यह सेवा मैं करूंगा।

[सब धन्य-धन्य करते हैं]

राणा— रत्नसिंह, तुम इस अल्पवय में यह असाध्य कार्य करोगे ? नहीं मैं तुम्हें यह जोखिम का कार्य नहीं दे सकता।

रत्नसिंह— दुहाई अन्नदाता ! चूड़ावतों का यह जन्मसिद्ध अधिकार है। महाराज, मैं बीड़ा उठाता हूँ।

राणा— परन्तु वीरवर इस काम में बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है।

रत्नसिंह— मैं समझता हूँ महाराज !

राणा— शत्रु बहुत प्रबल है, उसकी सेना अनगिनत है।

रत्नसिंह— सिंह गीदड़ों की भीड़ की चिन्ता नहीं करते।

राणा— हमारी सेना बहुत थोड़ी है और उसे तैयारी का समय बिलकुल नहीं है।

रत्नसिंह— हमारा सदुद्देश्य और तलवार यहाँ दोनों काफी हैं।

राणा— परन्तु सुनो ! कल्पना करो, तुम बादशाह की सेना को न रोक सके, तो हमारा सभी प्रयत्न निष्फल होगा।

रत्नसिंह— (तलवार पकड़कर) महाराज, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जबतक श्रीमान् कुमारी को ब्याह कर सकुशल उदयपुर न लौटेंगे, मैं शाही सेना को आगे न बढ़ने दूँगा—न मैं मरूँगा, न गिरूँगा।

सब— धन्य वीर ! धन्य !

राणा— तुम्हारा साहस और सत्यव्रत धन्य है। परन्तु वीर ! मैं तुम्हें ऐसे खतरे का काम सौंपते संकोच करता हूँ।

रत्नसिंह— तब मैं अभी यहीं अपना सिर अर्पण करूँगा महाराज ! यह मेरा वीर-व्रत है।

राणा— अच्छी बात है। तुम्हारा वीर-व्रत अटल रहे। आओ मैं तुम्हें समस्त मेवाड़ी सैन्य का सेनापति अभिषिक्त करता हूँ।

[अभिषेक की सामग्री आती है। राणा रत्नसिंह को सेनापति का पद देकर अपनी तलवार उसकी कमर में बाँधते हैं। सब धन्य-धन्य कहते हैं।]

राणा— बस ! अब समय कम और कार्य बहुत है। कल प्रातःकाल ही एक प्रहर रात्रि रहे हमारा कूच होगा। कुमार जयसिंह और भीमसिंह उदयपुर की रखवाली करेंगे। गोलकी दलपत और झाला गुलतानसिंह रत्नसिंह के साथ मेवाड़ी सैन्य के साथ रहेंगे। राव केसरीसिंह और राठौर जोधासिंह हमारे साथ चलेंगे। जाओ ब्राह्मण, कुमारी को संदेश दो। दीवानजी ! ब्राह्मण देवता को यथेष्ट दान-मान से सम्मानित करके सुरक्षा के साथ विदा करो।

[पर्दा बदलता है]

छठा दृश्य

[स्थान – उदयपुर : सोलंकी दलपत के महल का प्रान्त भाग। रत्नसिंह और उसकी भावी पत्नी सौभाग्यसुन्दरी। समय–सन्ध्याकाल।]

सौभाग्यसुन्दरी—आपकी जय हो! जाइए।

रत्नसिंह— एकदम विदा, कुमारी! अभी हमारे मिलन की उषा का उदय भी नहीं हुआ और विदा की घड़ी आ गई।

सौभाग्यसुन्दरी—यही तो राजपूती जीवन है। आप विजयी होकर शीघ्र लौटिए।

रत्नसिंह— (हँसकर) इसकी बहुत कम आशा है। हमारी शक्ति बहुत कम है और शत्रु अत्यन्त प्रबल है। फिर हमारे सिर पर अत्यन्त गुरुतर भार है।

सौभाग्यसुन्दरी—आप वीर हैं। आपको भय क्या है?

रत्नसिंह— कुछ नहीं, कुमारी! मैं परीक्षा में उत्तीर्ण होऊँगा।

सौभाग्यसुन्दरी—कैसी परीक्षा?

रत्नसिंह— भूल गईं, तुम मेरी योग्यता का प्रत्यक्ष प्रमाण चाहती थीं!

सौभाग्यसुन्दरी—वह मैं पा चुकी।

रत्नसिंह— कैसे?

सौभाग्यसुन्दरी—आपने यह कठिन बीड़ा उठाया, इसी से।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात......

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं।

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रिय वीर तो आन पर जूझते हैं, वे मर कर अमर होते हैं—यह तो आप जानते ही हैं। मैं मूर्खा कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा।

सौभाग्यसुन्दरी—जाइए आप ! (आँखों में आँसू भरकर) हम फिर मिलेंगे।

रत्नसिंह— शायद यहाँ या वहाँ ! (आकाश की ओर उँगली उठाता है)

सौभाग्यसुन्दरी—(आँसू गिराकर) ऐसा न कहिए।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—दासी का अपराध क्षमा करें।

रत्नसिंह— आह, वीरबाला ! तुम्हारी जैसी क्षत्रिय कन्याएँ ही पुरुषों को वीर बनाती हैं, परन्तु ...

सौभाग्यसुन्दरी—परन्तु क्या......

रत्नसिंह— कहूँ ?

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मेरी एक इच्छा थी।

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व......

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— एक वार .....

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए कहकर पुकारू"।

सौभाग्यसुन्दरी—(लजाकर) पुकारिए।

रत्नसिंह— विना अधिकार प्राप्त किए ?

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार कैसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का।

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार तो प्राप्त है। मैं आपकी मन-वचन से दासी हूँ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं।

सौभाग्यसुन्दरी—क्यों ? मेरा आपका वाग्दान हुआ है। मैं धर्म से आपकी हूँ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई।

सौभाग्यसुन्दरी—वह भी समय पर हो जायगी।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—आह, इतने कातर न हों।

रत्नसिंह— सुनो कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ।

सौभाग्यसुन्दरी—हाँ।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात......

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं।

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रिय वीर तो आन पर जूझते हैं, वे मर कर अमर होते हैं—यह तो आप जानते ही हैं। मैं मूर्ख कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा।

सौभाग्यसुन्दरी—जाइए प्राण ! (आँखों में आँसू भरकर) हम फिर मिलेंगे।

रत्नसिंह— शायद यहाँ या वहाँ ! (आकाश की ओर उँगली उठाता है)

सौभाग्यसुन्दरी—(आँसू गिराकर) ऐसा न कहिए।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—दासी का अपराध क्षमा करें।

रत्नसिंह— आह, वीरबाला ! तुम्हारी जैसी क्षत्रिय कन्याएँ ही पुरुषों को वीर बनाती हैं, परन्तु . ...

सौभाग्यसुन्दरी—परन्तु क्या......

रत्नसिंह— कहूँ ?

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मेरी एक इच्छा थी।

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व......

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— एक बार .....

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए कहकर पुकारूँ।

सौभाग्यसुन्दरी—(लजाकर) पुकारिए।

रत्नसिंह— बिना अधिकार प्राप्त किए ?

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार कैसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का।

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार तो प्राप्त है। मैं आपकी मन-वचन से दासी हूँ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं।

सौभाग्यसुन्दरी—क्यों ? मेरा आपका वाग्दान हुआ है। मैं धर्म से आपकी हूँ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई।

सौभाग्यसुन्दरी—वह भी समय पर हो जायगी।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—आह, इतने कातर न हों।

रत्नसिंह— सुनो कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ।

सौभाग्यसुन्दरी—हाँ।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात......

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं।

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रिय वीर तो आन पर जूझते हैं, वे मर कर अमर होते हैं—यह तो आप जानते ही हैं। मैं मूर्खा कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा।

सौभाग्यसुन्दरी—जाइए आप ! (आँखों में आँसू भरकर) हम फिर मिलेंगे।

रत्नसिंह— शायद यहाँ या वहाँ ! (आकाश की ओर उँगली उठाता है)

सौभाग्यसुन्दरी—(आँसू गिराकर) ऐसा न कहिए।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—दासी का अपराध क्षमा करें।

रत्नसिंह— आह, वीरबाला ! तुम्हारी जैसी क्षत्रिय कन्याएँ ही पुरुषों को वीर बनाती हैं, परन्तु . ...

सौभाग्यसुन्दरी—परन्तु क्या......

रत्नसिंह— कहूँ ?

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मेरी एक इच्छा थी।

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व......

सौभाग्यसुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— एक बार .....

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए कहकर पुकारूँ।

सौभाग्यसुन्दरी—(लजाकर) पुकारिए।

रत्नसिंह— बिना अधिकार प्राप्त किए ?

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार कैसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का।

सौभाग्यसुन्दरी—अधिकार तो प्राप्त है। मैं आपकी मन-वचन से दासी हूँ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं।

सौभाग्यसुन्दरी—क्यों ? मेरा आपका वाग्दान हुआ है। मैं धर्म से आपकी हूँ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई।

सौभाग्यसुन्दरी—वह भी समय पर हो जायगी।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—आह, इतने कातर न हों।

रत्नसिंह— सुनो कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी—कहिए।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ।

सौभाग्यसुन्दरी—हाँ।

सौभाग्यसुन्दरी—अवश्य मिलेंगे।

रत्नसिंह—इस जन्म में अथवा उस जन्म में।

सौभाग्यसुन्दरी—कीर्ति के पुल पर होकर।

रत्नसिंह—मैं अपना कर्तव्य पालन करने जाता हूँ। तुम अपना कर्तव्य पालन करना।

सौभाग्यसुन्दरी—करूँगी।

रत्नसिंह—इसी अल्पवय में! आशा, प्रेम और आकांक्षाओं से परिपूर्ण सुलगते हुए हृदय को लेकर?

सौभाग्यसुन्दरी—निश्चय स्वामी!

रत्नसिंह—बहुत कठिन है प्रिए।

सौभाग्यसुन्दरी—क्षत्रियबाला के लिए नहीं।

रत्नसिंह—तब विदा।

सौभाग्यसुन्दरी—विदा।

रत्नसिंह—स्मरण रहे, अपना कर्तव्य।

सौभाग्यसुन्दरी—निश्चिन्त रहिए।

रत्नसिंह—(आता-जाता घूमकर कुमारी का आलिंगन करता है फिर कुछ देर बाद) अब चला प्रिए, कर्तव्य का ध्यान रखना।

सौभाग्यसुन्दरी—(रोकर) दासी पर इतना अविश्वास?

रत्नसिंह—(आँसू पोंछकर) अविश्वास नहीं। परन्तु......अच्छा अब विदा प्रिए!

सौभाग्यसुन्दरी—विदा प्राणेश्वर!

[रत्नसिंह तेजी से जाता है और सौभाग्यसुन्दरी उस भूमि पर जहाँ रत्नसिंह खड़ा था, लेट कर फूट-फूट कर रोती है]

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर: सोनकी दलपत का घर: सौभाग्यसुन्दरी अकेली छज्जे में खड़ी, मैदान में सुसज्जित सेना को देख रही है। समय—प्रातःकाल]

सौभाग्यसुन्दरी—(स्वगत) यही तो राजपूती शान है। राजमहल का यह विशाल प्राङ्गण वीरों से भरपूर होकर कैसा देदीप्यमान हो रहा है। चपल घोड़े कैसे धीरज खो रहे हैं। कब मालिक का संकेत हो और वे अपनी उछलती चाल का रंग दिखावें। वीरों के शस्त्र प्रभात को इस मनोरम धूप में किस भाँति चमक रहे हैं! वह मेरे प्राणों के धन श्वेत घोड़े पर सवार सेना का निरीक्षण कर रहे हैं। उनके कण्ठ का वह मुक्ताहार कैसा प्यारा लग रहा है। कल जब उन्होंने मुझे छुआ तो जैसे जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ हो गया। आज यह प्रभात कैसा मनोरम दीख रहा है। ऐसा ही तो जीवन का प्रभात होता है। (विभोर होकर) प्रिये! प्रिये! कैसा प्यारा शब्द था। सुनकर रोम-रोम

पुलकित हो गया। इच्छा होती है, बारम्बार वह शब्द सुनूँ। वही शब्द, वही मधुर संगीत-स्वर से भी अधिक मधुर स्वर! (चौंककर) परन्तु......

हायरे, राजपूत जीवन! (आँसू पोंछकर) नहीं। आँखों में आँसू भरकर मुझे अपशकुन नहीं करना चाहिए। पृथ्वी और आकाश के देवता उनकी रक्षा करेंगे। यह देखो, वे इसी ओर को कुछ संकेत कर रहे हैं। देखो, घोड़े पर झुककर उन्होंने क्या कहा! यह कौन है! अरे, यह तो उनका प्रियभृत्य गुलाब है। यह भी गर्दन टेढ़ी करके मेरी ओर को देख रहा है। लो, वह इधर ही को चला। यह आ रहा है वह। स्वामी ने मेरे लिए कुछ सन्देश भेजा है। मेरे स्वामी ने। कल उन्होंने कहा था—प्रिये! प्रिये! ओफ। (आनन्दविभोर होकर चुप हो जाती है)

[कक्ष में गुलाब आता है।]

गुलाब— जुहार हाड़ी रानी!

रानी— ठाकुर, कैसे आए हो?

गुलाब— स्वामी का एक सन्देश है रानी?

रानी— क्या संदेश है, कहो।

गुलाब— वे कूँच कर रहे हैं।

रानी— उनकी यात्रा शुभ हो। वे विजयी होकर लौटें।

गुलाब— परन्तु......

रानी— परन्तु क्या ?

गुलाब— उन्होंने कहा है।

रानी— क्या कहा है ?

गुलाब— कैसे कहूँ ?

रानी— कहो ठाकुर।

गुलाब— कहा है, इस काल युद्ध से जीते जी बचकर आना सम्भव नहीं है।

रानी— क्षत्रिय का वीरगति प्राप्त होने से बढ़कर सौभाग्य क्या है।

गुलाब— परन्तु वे द्विविधा में पड़े हैं।

रानी— द्विविधा ? युद्ध यात्रा के समय क्षत्रिय को द्विविधा ?

गुलाब— वे रातभर द्विविधा में रहे।

रानी— छीः छीः. रातभर ? क्या द्विविधा है, सुनूँ तो मैं।

गुलाब— आपकी द्विविधा है रानी !

रानी— मेरी द्विविधा कैसी ?

गुलाब— वे कहते हैं, आप अभी युवा हैं, कच्ची उम्र है,संसार अभी देखा नहीं है। यदि कुछ उल्टा-सीधा हो गया तो आप कैसे क्षत्रिय-बाला का कठिन व्रतपूर्ण कर सकेंगी ?

रानी— क्यों ? क्या मैं क्षत्रिय-बाला नहीं हूँ।

गुलाब— आपकी दह आयु पाकर उपभोग की है।

रानी— पर क्षत्रिय-बाला जब चाहे आत्मोत्सर्ग कर सकती

है। उनसे कहो, वे निश्चित होकर शत्रु से लोहा लें और अपना कर्त्तव्य-पालन करें। मैं अपना कर्त्तव्य-पालन करूँगी।

गुलाब— मैंने समझाया था रानीजी, पर वे निरन्तर तुम्हारी ही चिन्ता कर रहे हैं।

रानी— छीः, युद्ध काल में स्त्री की चिन्ता।

गुलाब— वे प्रमाण चाहते हैं।

रानी— कैसा प्रमाण?

गुलाब— जिसे पाकर वे आपकी ओर से निश्चित होकर शत्रु से लोहा ले सकें।

रानी— (विचार कर) ऐसा प्रमाण चाहते हैं?

गुलाब— हाँ रानीजी, आपको उनकी द्विविधा दूर करनी होगी।

रानी— (कुछ देर गम्भीर मनन करके) अच्छा, मैं तुम्हें प्रमाण देती हूँ, उसे अपने स्वामी को देकर कहना कि यह हाड़ी रानी का प्रमाण है, अब निश्चित होकर शत्रु से युद्ध करें।

गुलाब— जो आज्ञा रानीजी!

रानी— ठाकुर, तनिक सावधान हो। तुम्हारी तलवार कैसी है देखूँ?

गुलाब— (कुछ डरकर तलवार देता हुआ) यह अति साधारण है, रानी जी!

रानी— फिर भी राजपूत की है। इतने बड़े-बड़े काम किए होंगे। क्यों? तुम तो वीरवर के सेवक हो।

गुलाब— यह तलवार उन्हीं की दी हुई है रानीजी, उनके बाल-काल में सेवक ने इसी तलवार से उन्हें तलवार चलाना सिखाया है।

रानी— (तलवार की धार परख कर) पानीदार चीज है। अच्छा, तो लो प्रमाण, अपने स्वामी को दे देना। (बिजली की भाँति तेजी से भरपूर हाथ गर्दन पर मारती है, सिर कटकर धरती में गिर पड़ता है, धड़ झूमता है। क्षण भर में घर के लोग जमा हो जाते हैं। गुलाब हक्का-बक्का खड़ा रह जाता है।

[पर्दा बदलता है]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—रूपनगर चारुमती के मंदिर का बाहरी भाग; समय—प्रातःकाल। स्त्री-पुरुष आ-जा रहे हैं। मन्दिर में से होम की ध्वनि आ रही है। ब्राह्मण वेद-पाठ कर रहे हैं। एक ओर से दो यवन सैनिक आकर चबूतरे पर बैठ जाते हैं। दूसरी ओर से विक्रम सोलंकी और दुर्जन हाड़ा बातें करते आते हैं]

विक्रम— मैं कहे देता हूँ कि जब तक शरीर में प्राण हैं मैं ब्याह नहीं होने दूँगा।

दुर्जन— क्या करोगे तुम ?

विक्रम— इस तलवार की धार का रस......

दुर्जन— रहने दो तलवार, बादशाह की ५० हजार सेना के सामने तुम्हारी तलवार क्या करेगी ? फिर जब राजा ही अपना शत्रु है।

विक्रम— कौन उस छोकरे को राजा कहता है, राजा मैं हूँ।

दुर्जन— यों तो मैं भी कह सकता हूँ कि सेनापति मैं हूँ।

विक्रम— तुम रूपनगर के सेनापति हो ही, दुष्ट राजा ने तुम्हें पदच्युत कर दिया तो इससे क्या ?

दुर्जन— तुम्हारे राजा कहने ही में क्या सार है। (निराश होकर) हमारी शक्तियाँ सीमित हैं। हम कुछ न कर सकेंगे।

विक्रम— अपने प्राण तो दे सकेंगे।

दुर्जन— तुमने क्या सोचा है ? सुना है, शाही सेना आजकल में आ पहुँचेगी।

विक्रम— हमने गुप्तरूप से वीरों का संगठन किया है। दो हजार राजपूत मरने-मारने को तैयार हैं।

दुर्जन— वे क्या बादशाह की ५० हजार सेना से मुकाबिला कर सकेंगे ?

विक्रम— (कान में कुछ कहकर) समझे ! हमें क्षण-क्षण पर

आया है।

दुर्जन— (आश्चर्य से) क्या सच ?

विक्रम— (धीरे से) अनन्तमिश्र को गए आज सातवाँ दिन है।

दुर्जन— तब तो आना होती है।

विक्रम— चलो फिर, उसी भग्न मन्दिर में गुप्तमन्त्रणा होगी। सब लोग पहुँच गए होंगे।

दुर्जन— चलो। (चौंक कर) हैं, मन्दिर के चबूतरे पर ये यवन सैनिक कौन हैं ?

विक्रम— क्या शाही सेना आ पहुँची ?

दुर्जन— दुष्ट स्त्रियों को घूर रहे हैं।

विक्रम— उनका अपमान कर रहे हैं। (दोनों आगे बढ़ते हैं)

विक्रम— (सैनिकों से) कौन हो तुम ?

एक सैनिक—(हकता से) इतना भी नहीं देख सकते, इन्सान हैं।

विक्रम— यहाँ क्यों बैठे हो, यह मन्दिर है। उठो चलते-फिरते नजर आओ।

दूसरा— (हँसकर) चले जाएँगे। बैठे हैं, कुछ तुम्हारा लेते तो नहीं।

विक्रम— यहाँ बैठने का तुम्हारा काम क्या है ?

पहिला सैनिक—ज्यादा कुछ नहीं, जरा दीदारबाजी।

विक्रम— (क्रुद्ध से) मन्दिर में दिल्लगी। उठो यहाँ से।

सिपाही— अपना काम देखो तुम खाम-खाह न बनो, वरना हमारी जबान और तेग साथ ही चलती है।

फूटें वैरी नैन।
नहीं आए।
नहीं आए।

[रोती है और दोनों हाथ से मुँह ढँक लेती है]

[निर्मला आती है]

निर्मला— रोने से क्या होगा ?

राजकुमारी—तब तू हँस। हँसने से शायद कुछ हो जाए।

निर्मला— समय आएगा तब हँसूँगी, अभी काम की बात करो।

राजकुमारी—काम की क्या बातें हैं ?

निर्मला— कुछ उपाय सोचना होगा।

राजकुमारी—उपाय कैसा ? शाही सेना परसों यहाँ आ पहुँचेगी। भाई ने तो बादशाह का साला बनने का इरादा पक्का कर ही लिया है। उन्हें इस सिलसिले में जागीरें मिलेंगी। अब मुझ अबला का रक्षक कौन है ?

निर्मला— रक्षक भगवान हैं। पर हमें रोकर नहीं, बुद्धि लड़ाकर काम करना चाहिए।

राजकुमारी—तू बुद्धि लड़ाकर देख।

निर्मला— एक युक्ति है।

राजकुमारी—क्या ?

निर्मला—उद्यापन का व्रत करो।

राजकुमारी—किसलिए ? सुहाग रहे, इसलिए ?

निर्मला— यह बात अभी रहे। अभी तो इसका गूढ़ उद्देश्य यह होगा कि ३ दिन का हमें और समय मिल जायगा। तीन दिन अभी बाकी हैं। ६ दिन में कुछ न कुछ हो ही रहेगा।

राजकुमारी—क्या होगा ? बादशाह की विपुल सेना तीन दिन में सारे कुए-तालाबों का पानी पी जायगी। सारे नगर का अन्न खा जायगी। इससे तो यही उत्तम है कि मै आज ही विष खा लूं। बादशाह मार्ग से लौट जाए।

निर्मला— सुनो ! अनन्त मिश्र को गए आज पांचवां दिन है। यदि विघ्न-बाधा न हुई तो वे पहुँच भी लिए और सहायता साथ लेकर चल भी दिए। ३ दिन में अवश्य राणा आ जाएंगे यह मेरा मन कहता है।

राजकुमारी—भाई मानेंगे ?

निर्मला— महारानी उन्हें मना लेंगी। मै महारानी को राजी कर लूंगी।

राजकुमारी—और जो वे न माने ?

निर्मला— तो भारतेश्वरी स्वयं उन्हें हुक्म देंगी। किसकी मजाल है,आलमगीर की मलिका का हुक्म टाल सके।

राजकुमारी—तू मर।

निर्मला— अभी नहीं। तुम्हारे हाथ पीले हो जाय तब।

फूटें बैरी नैन।
नहीं आए।
नहीं आए।

[रोती है और दोनों हाथ से मुँह ढँक लेती है]

[निर्मला आती है]

निर्मला— रोने से क्या होगा?

राजकुमारी—तब तू हँस। हँसने से शायद कुछ हो जाए।

निर्मला— समय आएगा तब हँसूँगी, अभी काम की बात करो।

राजकुमारी—काम की क्या बातें हैं?

निर्मला— कुछ उपाय सोचना होगा।

राजकुमारी—उपाय कैसा? शाही सेना परसों यहाँ आ पहुँचेगी। भाई ने तो बादशाह का साला बनने का इरादा पक्का कर ही लिया है। उन्हें इस सिलसिले में जागीरें मिलेंगी। अब मुझ अबला का रक्षक कौन है?

निर्मला— रक्षक भगवान हैं। पर हमें रोकर नहीं, बुद्धि लड़ाकर काम करना चाहिए।

राजकुमारी—तू बुद्धि लड़ाकर देख।

निर्मला— एक युक्ति है।

राजकुमारी—क्या?

निर्मला—उद्यापन का व्रत करो।

राजकुमारी—किसलिए ? सुहाग रहे, इसलिए ?

निर्मला— यह बात अभी रहे । अभी तो इसका गूढ़ उद्देश्य यह होगा कि ३ दिन का हमें और समय मिल जायगा । तीन दिन अभी बाकी हैं । ६ दिन में कुछ न कुछ हो ही रहेगा ।

राजकुमारी—क्या होगा ? बादशाह की विपुल सेना तीन दिन में सारे कुएं-नालाबों का पानी पी जायगी । सारे नगर का अन्न खा जायगी । इससे तो यही उत्तम है कि मैं आज ही विष खा लूं । बादशाह मार्ग से लौट जाए ।

निर्मला— सुनो ! अनन्त मिश्र को गए आज पांचवां दिन है। यदि विघ्न-बाधा न हुई तो वे पहुंच भी लिए और सहायता साथ लेकर चल भी दिए । ३ दिन में अवश्य राणा आ जाएंगे यह मेरा मन कहता है ।

राजकुमारी—भाई मानेंगे ?

निर्मला— महारानी उन्हें मना लेंगी । मैं महारानी को राजी कर लूंगी ।

राजकुमारी—और जो वे न मानें ?

निर्मला— तो भारतेश्वरी स्वयं उन्हें हुक्म देंगी । किसकी मजाल है,आलमगीर की मलिका का हुक्म टाल सके।

राजकुमारी—तू मर ।

निर्मला— अभी नहीं । तुम्हारे हाथ पीले हो जांय तब ।

राजकुमारी—(फीकी हँसी हँसकर) अरी चिन्ता न कर, सब दुखों की दवा मेरे पास यह है। (विषभरी अंगूठी दिखाती है)।

निर्मला— राजकुमारी, तुम जुग-जुग जिओ। मैं जाकर महारानी से कहती हूँ, तुम तनिक विश्राम करो।

राजकुमारी—(रोती हुई) अब मैं चिर-विश्राम करूँगी, सखी! (आँसू पोंछती है)।

[निर्मला रोती हुई जाती है]

[पर्दा गिरता है]

चौथा अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—रूपनगर का राजमहल : राजा रामसिंह और विक्रमसिंह। समय—मध्याह्न]

रामसिंह— (धरती में पैर पटक कर) मैं कहता हूँ, आपने यह साहस ही कैसे किया ? शाही आदमी को आपने आव देखा न ताव, झट से कत्ल कर दिया। (कुछ ठहर कर) अब जवाब तो मुझे देना होगा, आपको नहीं। राजा मैं हूँ—आप नहीं। आप क्या सोच रहे हैं, काकाजी !

विक्रमसिंह—यही सोच रहा हूँ कि रूपनगर के राजा रामसिंह हैं, विक्रमसिंह नहीं।

रामसिंह—सो तो है ही। इसी से मैं पूछता हूँ कि मेरे बिना हुक्म के आपने शाही सिपाही को कैसे कत्ल किया ?

विक्रमसिंह—कैसे बताऊँ। कोई शाही सिपाही यहाँ हाजिर होता तो अभी झट से उसका सिर काट लेता।

रामसिंह—यह तो अन्धेर है। अजी मैं पूछता हूँ क्यों ? किसलिए ?

विक्रमसिंह—यह आपने कब पूछा ?

रामसिंह—अच्छा, अब सही। कहिए, आपने क्यों उसका सिर काट लिया ?

विक्रमसिंह—वह देवी के मन्दिर के सिंहद्वार पर बैठा स्त्रियों को घूर रहा था। मैंने जब उसे चले जाने को कहा तो वह गुस्ताखी कर बैठा। विक्रमसिंह सोलंकी को यह सहन कहाँ ? झट से तलवार सूँती और खट से भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। बस, इतनी ही सी तो बात है, महाराज !

रामसिंह—आप हमारे काका हैं—तो, क्या मेरे राज्य में मनमानी करेंगे।

विक्रमसिंह—तुम राजा हो गए तो क्या अपने बड़े-बूढ़ों को कुछ भी न समझोगे ? धर्म का तिरस्कार करोगे ? मर्यादा और नीति सबको धता बताओगे ?

रामसिंह—यह तो खूब रही। आप क्या मुझसे कैफियत तलब करेंगे। मुझसे ? राजा से ?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं ? तुम्हें राजा बनाया किसने है, हमी ने न ? अगर तुम सत्य-कर्म से राज-काज करोगे तो राजा नहीं तो जैसे हमने तुम्हें राजा बनाया है, उसी तरह राज्य से उतार भी देंगे।

रामसिंह—आपकी इतनी मजाल। आप राजा से ऐसी बातें कहते हैं?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं। एक तो मैं राजा का काका, दूसरे मेरी प्यारी यह तलवार जब तक मेरे पास है, निर्भय हो सत्य कहूँगा। उसे तुम रोक न सकोगे।

रामसिंह—(गुस्से से) नहीं, मेरे राज्य में आप मनमानी न करने पाएँगे।

विक्रमसिंह—(गुस्से से) विक्रम सोलंकी के रूपनगर में रहते तुम मनमानी न करने पाओगे।

रामसिंह—मैं राजा हूँ।

विक्रमसिंह—अनीति करोगे तो राजा नहीं रहने पाओगे।

रामसिंह—मैं आपको गिरफ्तार करता हूँ। (पुकार कर) कोई है?

[दो सेवक सिपाही आते हैं]

रामसिंह—इन्हें बाँध लो।

विक्रमसिंह—(हँसकर) क्या कहते हैं! (तलवार सूँतकर) जिसमें दम हो, वह आगे आए।

[दोनों सिपाही ठिठक जाते हैं]

रामसिंह—बदजातो! क्या देखते हो, आगे बढ़ो!

विक्रमसिंह—तुम खुद ही क्यों नहीं आगे बढ़ते!

रामसिंह—(तलवार सूँतकर) बढ़ो बढ़ो। तो राजा के अपमान का फल चखो।

विक्रमसिंह—(वार बचा कर) रामसिंह, बचपन में मैंने तुझे

रामसिंह—यह तो अन्धेर है। अजी मैं पूछता हूँ क्यों ? किसलिए ?

विक्रमसिंह—यह आपने कब पूछा ?

रामसिंह—अच्छा, अब सही। कहिए, आपने क्यों उसका सिर काट लिया ?

विक्रमसिंह—वह देवी के मन्दिर के सिंहद्वार पर बैठा स्त्रियों को घूर रहा था। मैंने जब उसे चले जाने को कहा तो वह गुस्ताख़ी कर बैठा। विक्रमसिंह सोलंकी को यह सहन कहाँ ? झट से तलवार सूँती और खट से भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। बस, इतनी ही सी तो बात है, महाराज !

रामसिंह—आप हमारे काका हैं—सो, क्या मेरे राज्य में मनमानी करेंगे ।

विक्रमसिंह—तुम राजा हो गए सो क्या अपने बड़े-बूढ़ों को कुछ भी न समझोगे ? धर्म का तिरस्कार करोगे ? मर्यादा और नीति सबको धता बताओगे ?

रामसिंह—यह तो खूब रही। आप क्या मुझसे कैफियत तलब करेंगे। मुझसे ? राजा से ?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं ? तुम्हें राजा बनाया किसने है, हमी ने न ? अगर तुम सत्य-कर्म से राज-काज करोगे तो राजा नहीं तो जैसे हमने तुम्हें राजा बनाया है, उसी तरह राज्य से उतार भी देंगे।

रामसिंह—आपकी इतनी मजाल। आप राजा से ऐसी बातें कहते हैं ?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं। एक तो मैं राजा का काका, दूसरे मेरी प्यारी यह तलवार जब तक मेरे पास है, निर्भय हो सत्य कहूँगा। उसे तुम रोक न सकोगे।

रामसिंह—(गुस्से से) नहीं, मेरे राज्य में आप मनमानी न करने पाएँगे।

विक्रमसिंह—(गुस्से से) विक्रम सोलंकी के रूपनगर में रहते तुम मनमानी न करने पाओगे।

रामसिंह—मैं राजा हूँ।

विक्रमसिंह—अनीति करोगे तो राजा नहीं रहने पाओगे।

रामसिंह—मैं आपको गिरफ्तार करता हूँ। (पुकार कर) कोई है?

[दो सेवक सिपाही आते हैं]

रामसिंह—इन्हें बाँध लो।

विक्रमसिंह—(हँसकर) क्या कहते हैं! (तलवार सूँतकर) जिसमें दम हो, वह आगे आए।

[दोनों सिपाही ठिठक जाते हैं]

रामसिंह—बदजातो! क्या देखते हो, आगे बढ़ो!

विक्रमसिंह—तुम शूर हो क्यों नहीं आगे बढ़ते!

रामसिंह—(तलवार सूँतकर) यही सही। तो राजा के अपमान का फल चखो।

विक्रमसिंह—(वार बचा कर) रामसिंह, बचपन में मैंने तुझे

कितना तलवार चलाना सिखाया था—पर तुझे कुछ न आया। देख, वार इस तरह किया जाता है। (वार करता है–रामसिंह की तलवार झन्नाकर टूट जाती है) कह—सिर काट लूँ या छाती फाड़ डालूँ !

रामसिंह— राजा के अपमान का बदला समय पर लिया जायगा।

[जाता है]

[शार्दूलसिंह कई सिपाहियों के साथ आता है]

विक्रमसिंह–शार्दूलसिंह, अभी हमें बहुत से काम करने हैं। कुछ शाही सैनिक किले में ठहर रहे हैं और बादशाह के आने की प्रतीक्षा में हैं, पर बादशाह अभी तीन दिन की मंजिल पर है, आज वे किसी हालत में पहुँच नहीं सकते, किन्तु विवाह का मुहूर्त तो आज ही है, सावधान रहो। सूर्यास्त के बाद सभी शाही सिपाही कैद कर लिए जाएँ और महलों के सब द्वार और राहों पर अपने विश्वस्त जनों का पहरा रहे। (कान में कुछ कह कर) ज्यों ही यह संकेत कोई कहे—उसे बेखटके भीतर आने दो। जो यह संकेत न बोले, उसे तुरन्त मार दो। जाओ।

शार्दूलसिंह—जो आज्ञा महाराज !

[शार्दूलसिंह जाता है]

विक्रमसिंह—महाराणा को आज सूर्यास्त तक यहाँ आ जाना चाहिए—मुझे ठीक समाचार मिला था—परन्तु वे

अभी तक नहीं आए हैं, सूर्यास्त में अब सिर्फ दो घड़ी शेष हैं। बादशाह को भी आज रूपनगर के सिवाने पर आ जाना चाहिए था। पर वह भी अभी दूर है। यह क्या मामला है। देखूँ, आज राजकुमारी की रक्षा कैसे होती है।

[जाता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—नगर के महल का तीसरा भाग : महल में ब्याह की धूम-धाम हो रही है। सखियाँ चारुमती का शृंगार कर रही हैं। डाढ़िनें गीत गा रही हैं। समय—सन्ध्या। चारुमती चुपचाप आँसू बहाती हुई बैठी है। निर्मला जड़ाऊ जेवरों का थाल लेकर आती है।]

निर्मला— जड़ाऊ गहने पहनो कुमारीजी, आज तुम्हारे सुहाग का दिन है।

चारुमती— पहना दे सखी, सुहाग न सही सुहाग का स्वांग ही सही। लाओ देखूँ तो दुलहिन कैसे सजा करती हैं? खूब सजा दो, दुलहिन बना दो। (रोती है)

निर्मला— (धीरे से) छीः सुहाग के समय रोती हो सखी! धीरज धरो। तुम्हीं अधीर होगी तो फिर हम क्या करेंगी?

चारुमती— अरी कैसे धीरज धरूँ, अभी तक राणाजी नहीं आए।

निर्मला— और न बादशाह की फौज का ही कहीं पता है, शाही सेना का पता लगाने कासिद दौड़े फिर रहे हैं।

चारुमती— मरे वह मुआ! उनकी तलाश के लिए भी किसी को भेजा है?

निर्मला— काका विक्रमसिंह ने अपने चर लगा रखे हैं। उन्हें आशा है ......।

चारुमती— आशा, आशा, हाय यह आशा कैसी भारी चीज है। परन्तु सखी, यह मेरी रक्षा करेगी। (अँगूठी दिखाती है) इसमें हलाहल विष भरा है।

निर्मला— (आँसू भरकर) मरें तुम्हारे दुश्मन, तुम जीओ सखी! (आंसू पोंछकर धीरे से कान में) इसमें कुछ भेद मालूम होता है।

चारुमती— कैसा भेद?

निर्मला— न बादशाह आए न राणाजी, कहीं मार्ग में मुठभेड़ हो गई हो तो.....।

चारुमती— हे परमेश्वर, क्या होने वाला है!

निर्मला— सब ठीक होगा। चुप। वह राजा आ रहे हैं,

[रामसिंह व्यग्र भाव से आता है]

रामसिंह— (स्वगत) बड़ी मुश्किल है। हर जगह कमी ही कमी नजर आती है। बहुत कोशिश करता हूँ कि सब

ठीक-ठाक रहे—मगर जहाँ देखता हूँ, कसर है। बादशाह सलामत अभी नहीं आए। दिन छिप रहा है, विवाह का मुहूर्त निकट आ गया। उधर बन्दोबस्त देखता हूँ तो......(कुछ सोचकर) खैर, देखा जाएगा। (पुकार कर) कोई है?

[एक सेवक आता है]

सेवक— महाराज की क्या आज्ञा है?

रामसिंह— (जोर से) कामदार साहेब कहाँ हैं, बदनसीब!

सेवक— (हाथ जोड़कर) सरकार ड्योढ़ियों पर हाजिर हैं।

रामसिंह— तो उन्हें यहाँ ले आ। खड़ा-खड़ा क्या मुझे खाएगा?

सेवक— जो आज्ञा!

[जाता है]

रामसिंह— (चाव से) राजकुमारी, तुम्हें जानना चाहिए कि तुम आज भारतेश्वरी बनने जा रही हो। तुम्हारे भाग्य पर बड़ी-बड़ी राजकुमारियों को डाह होगी। (कुछ रुक कर) हाँ, मैं तुम्हें......।

चारुमती— (जोर से) चुप रहो भाई......।

रामसिंह— (नर्मी से) समझ गया। रूपनगर के राजा को डाँटने डपटने का अब तुम्हें अधिकार हो गया है, तुम ठहरी सम्राज्ञी, बड़े-बड़े महाराजाओं को डाँट सकती हो। (हँसकर) मगर देखना, बादशाह को मुट्ठी में रखना, मुट्ठी में!

[कामदार आता है]

की स्त्रियाँ गाती हैं]

चारुमती— (माता को देखकर लिपटकर) माता, इस कृतघ्न पुत्री को क्षमा करना।

राजमाता—बेटी तेरा सौभाग्य प्रबल रहे। (राजसिंह से) महाराज, राजपूत-कन्या का आपने उद्धार कर अपने योग्य ही कार्य किया है। हमसे कुछ भेंट-भलाई तो बन नहीं पड़ी तथापि यह प्रेमचिह्न ग्रहण करें। [बहुमूल्य मोतियों की माला गले में डालती है]।

राजसिंह— अवसर देखकर ही सब कुछ होता है, अतः अभी तो हम तुरन्त ही जाते हैं (विक्रमसिंह से) आपको हम रूपनगर का महाराज स्वीकार करते हैं। (अपनी जड़ाऊ तलवार उनकी कमर में बाँधते हैं)

[सब जय, महाराज की जय, मेवाड़पति की जय चिल्लाते हैं।]

[पर्दा गिरता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—रूपनगर और दिल्ली का तिराहा : शाही सेना की छावनी पड़ी है। युद्ध की तबाही के चिह्न इधर-उधर दिखाई पड़ते हैं बादशाह अपने खीमे में दिलेरखाँ से बातें करते हैं।
समय—रात्रि।]

बादशाह— क्या कहा, मेवाड़ की फौज ?

दिलेरखाँ— जी हाँ, जहाँपनाह ! वह राना की फौज थी ।

बादशाह— मगर हम मेवाड़ पर तो चढ़ाई नहीं कर रहे थे !

दिलेरखाँ— मैंने कहा था हुजूर, फौज के सरदार ने लापरवाही से जवाब दिया, हमें काटकर जहाँ जाना हो चले जाओ ।

बादशाह— कौन था, वह बदनसीब ?

दिलेरखाँ— वह एक कम उम्र नौजवान था । अभी रेखें भीगी थीं । उसकी आँखों में आग, बोली में तूफान, तलवार में कयामत और झपट में बिजली थी । वह वहशत का पुतला बना था । उसके गले में एक औरत का कटा हुआ सिर लटक रहा था ।

बादशाह— औरत का सिर ?

दिलेरखाँ— जी हाँ, हुजूर ! वह मरने के इरादे से आया था, शाही फौज में वह जिधर गया, काई-सी चीरता चला गया । वह तिल-तिल कट कर गिरा । वहाँ वह शाही बन्दों की लाशों के ढेर पर हमेशा के लिए सोया पड़ा है । उसकी तलवार टूट गई है । मगर उसकी मूँठ उसकी मुट्ठी में अब भी कस कर जकड़ी हुई है ।

बादशाह— इस्लामनगर अब यहाँ से कितनी दूर है ?

दिलेरखाँ— हुजूर, तीन दिन की मंजिल और है ।

बादशाह— मगर शाही की ताकत तो कम है ।

दिलेरखाँ— कल तक वहाँ पहुँचना नामुमकिन है। फौज थकी हुई, सुस्त और बर्बाद है। उसको तरतीब नहीं दी जा सकती। फिर, दुश्मन हालांकि पायमाल हो चुके हैं—फिर भी उनका खतरा बना हुआ है।

बादशाह— जो कुछ भी हो—मगर इस मूँजी जगह से फौरन लश्कर कूँच करना चाहिए और रूपनगर हमारे पहुँचने की खबर भिजवा देना चाहिए।

दिलेरखाँ— जो हुक्म! मगर मुझे कुछ दाल में काला नजर आता है।

बादशाह— यानी?

दिलेरखाँ— मेवाड़ की फौज का शाही सवारी को रास्ते में अटकाना किसी खास मकसद से ही हो सकता है।

बादशाह— तुम क्या कहना चाहते हो?

दिलेरखाँ— यही, कि रूपनगर के राजा ने दगा की है। उसने इधर हमें बुलाया है—उधर राना को हमारी घात में लगा दिया।

बादशाह— (गुस्से से बेचैन होकर) मगर ऐसा हुआ तो मैं रूपनगर और उदयपुर दोनों ही को खत्म कर दूँगा।

दिलेरखाँ—बहतर, तो अब जहाँपनाह आराम करें।

बादशाह— सुबह ही लश्कर का कूँच होगा।

दिलेरखाँ—जो हुक्म। [जाता है]

[पर्दा बदलता है]

चौथा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : महाराणा और उनके दो-चार खास-खास सरदार राजमहल के एक पार्श्व में खड़े हैं ।]

एक सरदार—अन्नदाता को रूपनगर से सकुशल लौट आने की बधाई !

राणा— परन्तु सरदारो, जब तक मैं रावत रत्नसिंह के समाचार न जान लूँ—मेरा उद्वेग शान्त नहीं हो सकता । अभी तक युद्ध के कुछ भी समाचार नहीं मिले । (चौंक कर) यह कौन आ रहा है ।

[एक योद्धा लोहू-लुहान आता है]

योद्धा— (राणा के आगे घुटनों के बल गिरकर) अन्नदाता की जय हो—मैं युद्ध क्षेत्र से आ रहा हूँ ।

राणा— कहो वीर, युद्ध-क्षेत्र के समाचार कहो ?

योद्धा— महाराज, वहाँ ऐसा घमासान युद्ध हुआ कि रक्त का नदियाँ बह गईं । जैसे वर्षा ऋतु में बादल उमड़-उमड़ कर, गरज-गरज कर मूसलाधार वर्षा करते हैं, उसी भाँति राजपूतों ने शत्रुओं को चारों ओर से काट डाला ।

राणा— तो युद्ध में हमारी जय हुई ?

योद्धा— अन्नदाता, अब इसमें क्या कहना है । श्रीमान् राजकुमारी को हरण कर लौट आए । पातिशाह आलमगीर को यह मुँह की खानी पड़ी कि जिसे

वह चिरकाल तक याद रखेगा।

राणा— क्या विजयी वीर रत्नसिंह पीछे आ रहा है।

योद्धा— हाँ महाराज, विजयी वीर, राजपूत धर्म का पालन कर ऐसी आनबान से आ रहा है, जैसी आनबान से आज तक कोई योद्धा मेवाड़ में न आया होगा।

राणा— तुम क्या कहना चाहते हो?

योद्धा— घणी खम्मा अन्नदाता। वह वीर आ रहा है, वह वीर शिरोमणि। तलवार का धनी।

राणा— सरदारो, विजयी वीर का स्वागत किया जाय। किले पर, महल में, नगर में, सर्वत्र रोशनी होनी चाहिए। मैं डंका और धौंसा, छत्र और चँवर उसे परम्परा के लिए प्रदान करता हूँ।

योद्धा— डंका और धौंसा बजने दीजिए महाराज। सर्वत्र रोशनी भी होने दीजिए। जिससे सब कोई उसे देखें, उसके उस महान् उत्सर्ग को—उसके बलिदान को।

राणा— ठाकुर! तुम क्या कह रहे हो?

योद्धा— (आँखों में आँसू भरकर) अन्नदाता, सत्य ही कह रहा हूँ।

राणा— तुम्हारी बातें संदिग्ध हैं। रावत रत्नसिंह जीवित है न?

योद्धा— महाराज, वे जीवन को जय कर चुके।

राणा— (ठण्डी साँस लेकर) तो यों गये वीरवर रत्नसिंह

अब नहीं हैं।

योद्धा— अन्नदाता की जय हो ! रावत रत्नसिंह अमर हुए, उन्होंने शत्रु से ऐसा लोहा लिया कि जिसका नाम वास्तव में लोहा लेना है। महाराज, हम उनके मृत शरीर को ले आए हैं।

राणा— रत्नगर्भा वसुन्धरा का एक लाल अपने उठते हुए जीवन में ही समाप्त हो गया। धर्म और कर्तव्य की वेदी पर बलिदान होने का यह अद्भुत उदाहरण रहा। (आँखों में आँसू भरकर) परन्तु, इस वीर को मैं कुछ भी पुरस्कार न दे सका।

राठौर जोधासिंह—महाराज, वीर का पुरस्कार तो उसकी यशस्विनी मृत्यु ही है। जो क्षत्रिय अपने कर्तव्य का पालन करता हुआ जीवन उत्सर्ग करे, उसकी होड़ कौन कर सकता है ? महाराज, यह शरीर नश्वर है और जीवन नगण्य। कर्तव्य और बलिदान ही उसके मूल्य की वृद्धि करता है। रावत रत्नसिंह का जीवन अमूल्य रहा, हम लोग उस पर डाह करते हैं, महाराज !

झाला सुलतानसिंह—किसी कवि ने कहा है—

कृपण जतन धन रो करे, कायर जीव जतन्न।
सूर जतन उण रो करे, जिणरो खायो अन्न॥

राणा— धन्य है, वह सूर ! (जोर से) कहो, उस वीरवर की

वीर-गाथा विस्तार से कहो।

योद्धा— महाराज, कहाँ तक उस वीर-गाथा को बयान करूँ। किसान जैसे दराँत से खेत काटता है, उसी प्रकार चूड़ावत वीर ने शत्रु सेना को काट डाला। उनका शरीर शत्रुओं की लोथों के ढेर में मिला।

राणा— त्यागमूर्ति चूड़ाजी का घराना मेवाड़ में त्याग और तप का आदर्श कायम कर चुका है। कहो, वीर कितने योद्धा युद्ध भूमि से बचे हैं।

योद्धा— कुछ उँगलियों पर गिनने योग्य। परन्तु चिन्ता नहीं महाराज! शरणागत की रक्षा हो गई और मेवाड़ की लाज रह गई।

राणा— वह देश और जाति धन्य है जहाँ हाड़ी रानी जैसी बालिकाएँ और रत्नसिंह जैसे वीर बालक जन्म लें। जिनके जीवनउत्सर्ग और आदर्श के नमूने हों। जाओ वीर, तुम आराम करो। मैं इस योद्धा का और उसकी विजयिनी सेना का वह स्वागत करूँगा कि जिसका नाम। सरदारो आओ, वीर-पूजा की तैयारी करें।

सरदार गण—चलिए अन्नदाता! (सब जाते हैं) चारण विरद गाता है—

वेह विरद रजपूत प्रथम मुख झूँठ न बोले।
वेह विरद रजपूत पर-त्रिय काछ न खोले।

येह विरद रजपूत आय ,बांटे कर जोरें।
येह विरद रजपूत एक लाखां विच ओरें।
जम राण पाये पाछा धरे देखि मतो अवधूतरो।
करतार हाथ दीधी करद येह विरद रजपूतरो।

[पर्दा गिरता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर का राजमहल : कुंवर जयसिंह की रानी कमल-कुमारी अपने शयन कक्ष में। समय—रात्रि : कोई नेपथ्य में गा रहा है। रानी ध्यान से सुन रही है।)

झिलमिलाती रात आई।
सांझ की आभा सुनहरी छा रही थी दिव्य नभ में।
भानु तपकर अस्त होने जा रहा था श्रान्त पथ में।
कालिमा की कोर जाग्रत जो हुई क्या चाल आई।
झिलमिलाती रात आई।
व्योम व्यापक में उजागर दिव्य तारे भर रहे हैं।
मालिनी के भाल पर क्या हास्य सा ये कर रहे हैं।
ज्योति ने मानो तमिस्रा भेदने की घात पाई।
झिलमिलाती रात आई।
कौन पक्षी फिर विरह का गीत गाता है कहीं से?
प्राण का क्रन्दन सुनाता कौन पाता है कहीं से?

राग छलकाती हुई विश्रान्ति की तह रात आई।
झिलमिलाती रात आई।

रानी— (आकाश की ओर देखकर) अनन्त आकाश में ये उज्ज्वल नक्षत्र कैसे भले मालूम देते हैं। न-जाने ये कितनी दूर से इस अन्धकार में आलोक बिखेर रहे हैं। और इस आलोक बिखेरने की यह कथा कितनी पुरानी, कितनी प्रभावशाली है। कितने कवियों के कवित्वमय हृदयों ने इसे देखा है। कितनी विरहिणी नारियों की आत्मा का व्याकुल भाव इन्होंने देखा है। यह मूक ज्योतिर्मण्डल जगत् में एक सौन्दर्य का विस्तार करता है। इनसे रात कितनी सुन्दर बन गई है। परन्तु यही क्या इनका अस्तित्व है! नहीं। अति दूर अपने ध्रुव पर ये सब महान् हैं। उसी महानता की प्रतीक्षा इनका यह झिलमिल प्रकाश है।

[कुमार जयसिंह आते हैं]

जयसिंह— वाह, यह चुपचाप तुम्हारा रात्रि निरीक्षण हो रहा है।

कमलकुमारी—हाँ स्वामी, आज अभी से आप अवकाश पा गए?

जयसिंह— हाँ प्रिये! इन प्राणों को तो तुमने अटूट नेह के तारों से बाँध रखा है, कहीं भी हों खिंचकर यहीं चले आते हैं। अब राणाजी के लौट आने पर मुझे

अवकाश भी मिल गया है। पर तुम क्या सोच रही हो प्रिये !

कमलकुमारी—कुछ नहीं। कोई गा रहा था कि यह मिल-मिलाती रात विश्राम का सन्देश लाई है, मैं सोच रही थी......जाने दो—यह कुछ नहीं।

जयसिंह— कहो प्रिये, क्या सोच रही थीं ?

कमलकुमारी—सोच रही थी—अन्धकार सदैव ही विश्राम का सन्देश लाता है, साथ ही विभीषिकाएँ भी। सब लोग ही रात के अन्धकार में विश्राम कर रहे हैं। यही जानकर चोरों को चोरी की घात मिलती है।

जयसिंह— इसमें तुम क्या सोच रही हो, प्रिये ?

कमलकुमारी—यही तो स्वामी ! क्या जीवन में कभी कोई विश्राम भी कर पाता है ? हाँ, जीवन के अन्त की बात तो दूसरी है।

जयसिंह— जीवन के अन्त की कैसे ?

कमलकुमारी—कैसे नहीं। रत्नसिंह और सौभाग्यसुन्दरी का ही उदाहरण लो। अब वे कहीं न कहीं चिर-विश्राम कर रहे होंगे। वे कठिन कर्तव्य तो पूरा कर चुके।

जयसिंह— यह नहीं मानता, पर अभी तो चलो, हम विश्राम करें।

कमलकुमारी—बिना ही कर्तव्य पूरा किए ? जीवन के सिर पर कर्तव्य का भार लादे बीच मार्ग में विश्राम कैसे ?

राग छलकाती-हुई विश्रान्ति की तह रात आई।
झिलमिलाती रात आई।

रानी— (आकाश की ओर देखकर) अनन्त आकाश में ये उज्ज्वल नक्षत्र कैसे भले मालूम देते हैं। न-जाने ये कितनी दूर से इस अन्धकार में आलोक बिखेर रहे हैं। और इस आलोक बिखेरने की वह कथा कितनी पुरानी, कितनी प्रभावशाली है। कितने कवियों के कवित्वमय हृदयों ने इसे देखा है। कितनी विरहिणी नारियों की आत्मा का व्याकुल भाव इन्होंने देखा है। यह मूक ज्योतिर्मण्डल जगत् में एक सौन्दर्य का विस्तार करता है। इनसे रात कितनी सुन्दर बन गई है। परन्तु यही क्या इनका अस्तित्व है! नहीं। अति दूर अपने ध्रुव पर ये सब महान् हैं। उसी महानता की प्रतीक्षा इनका यह झिलमिल प्रकाश है।

[कुमार जयसिंह आते हैं]

जयसिंह— वाह, यह चुपचाप तुम्हारा रात्रि निरीक्षण हो रहा है।

कमलकुमारी—हाँ स्वामी, आज अभी से आप अवकाश पा गए?

जयसिंह— हाँ प्रिये! इन प्राणों को तो तुमने अटूट नेह के तारों से बाँध रखा है, कहीं भी हों खिचकर यहीं चले आते हैं। अब राणाजी के लौट आने पर मुझे

अवकाश भी मिल गया है। पर तुम क्या सोच रही हो प्रिये !

कमलकुमारी—कुछ नहीं। कोई गा रहा था कि यह झिलमिलाती रात विश्राम का सन्देश लाई है, मैं सोच रही थी......जाने दो—यह कुछ नहीं।

जयसिंह— कहो प्रिये, क्या सोच रही थीं ?

कमलकुमारी—सोच रही थी—अन्धकार सदैव ही विश्राम का सन्देश लाता है, साथ ही विभीषिकाएँ भी। सब लोग ही रात के अन्धकार में विश्राम कर रहे हैं। यही जानकर चोरों को चोरी की घात मिलती है।

जयसिंह— इसमें तुम क्या सोच रही हो, प्रिये ?

कमलकुमारी—यही तो स्वामी ! क्या जीवन में कभी कोई विश्राम भी कर पाता है ? हाँ, जीवन के अन्त की बात तो दूसरी है।

जयसिंह— जीवन के अन्त की कैसे ?

कमलकुमारी—कैसे क्या ? रत्नसिंह और सौभाग्यसुन्दरी का ही उदाहरण लो। अब वे कहीं न कहीं चिर-विश्राम कर रहे होंगे। वे कठिन कर्तव्य तो पूरा कर चुके।

जयसिंह— यह नहीं सकता, पर अभी तो चलो, हम विश्राम करें।

कमलकुमारी—बिना ही कर्तव्य पूरा किए ? जीवन के सिर पर कर्तव्य का भार लादे बीच मार्ग में विश्राम कैसे ?

उनको स्मरण करते हुए नीचे लिखी बातों पर आपका ध्यान दिलाता हूँ जिनमें आपकी और प्रजा की भलाई है। मैंने यह सुना है कि मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध कार्यवाही करने की जो तदवीर हो रही है, उसमें आपका बहुत रुपया खर्च हो गया है और इस काम में खजाना खाली हो जाने के कारण उसकी पूर्ति के लिए आपने जजिया कर लगाने की आज्ञा दी है।

सब दर्बारी—शिव, शिव ! धिक्कार है, इस प्रवृत्ति को।

राणा— आप लोग शान्ति से सुनिए।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'आप जानते हैं कि आपके पूर्वज स्वर्गीय मुहम्मद जलालुद्दीन अकबर शाह ने ५२ साल तक न्यायपूर्वक शासन कर प्रत्येक जाति को आराम और सुख पहुँचाया। चाहे वे ईसाई, दाऊदी, मुसलमान, ब्राह्मण और नास्तिक हों, सब पर उनकी समान कृपा रही। इसी से लोगों ने उन्हें जगद्गुरु की पदवी दी थी।

एक सरदार—गुण ही जगत में पूजे जाते हैं।

दीवान— (पढ़ते हुए) फिर स्वर्गीय नूरुद्दीन जहाँगीर ने भी २२ वर्ष तक प्रजा की रक्षा कर अपने आश्रित राज वर्ग को प्रसन्न रखा—इसी तरह सुप्रसिद्ध आला हजरत शाहजहाँ ने भी ३२ वर्ष तक दया और नेकी

उनको स्मरण करते हुए नीचे लिखी बातों पर आपका ध्यान दिलाता हूँ जिनमें आपकी और प्रजा की भलाई है। मैंने यह सुना है कि मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध कार्यवाही करने की जो तदबीर हो रही है, उसमें आपका बहुत रुपया खर्च हो गया है और इस काम में खजाना खाली हो जाने के कारण उसकी पूर्ति के लिए आपने जजिया कर लगाने की आज्ञा दी है।

सब दर्बारी—शिव, शिव ! धिक्कार है, इस प्रवृत्ति को।

राणा— आप लोग शान्ति से सुनिए।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'आप जानते हैं कि आपके पूर्वज स्वर्गीय मुहम्मद जलालुद्दीन अकबर शाह ने ५२ साल तक न्यायपूर्वक शासन कर प्रत्येक जाति को आराम और सुख पहुँचाया। चाहे वे ईसाई, दाऊदी, मुसलमान, ब्राह्मण और नास्तिक हों, सब पर उनकी समान कृपा रही। इसी से लोगों ने उन्हें जगद्गुरु की पदवी दी थी।

एक सरदार—गुण ही जगत में पूजे जाते हैं।

दीवान— (पढ़ते हुए) फिर स्वर्गीय नूरुद्दीन जहाँगीर ने भी २२ वर्ष तक प्रजा की रक्षा कर अपने आश्रित राज वर्ग को प्रसन्न रखा—इसी तरह सुप्रसिद्ध आला हजरत शाहजहाँ ने भी ३२ वर्ष तक दया और नेकी

से राज्य कर धन पाया।

सब सरदार—खूब लिखा!

दीवान— (पढ़ते हुए) 'आपके पूर्वजों के ये भलाई के काम थे। इन उन्नत और उदार सिद्धान्तों पर चलते हुए वे जिधर पैर उठाते थे, उधर विजय और सम्पत्ति उनका साथ देती थी। उन्होंने बहुत से देश और किले जीते। अब आपके समय में बहुत से प्रदेश आपकी आधीनता से निकल गए हैं और अब आपके अत्याचार होने से और भी बहुत से इलाके आपके हाथ से निकल जावेंगे। आपकी प्रजा पैरों के नीचे कुचली जा रही है और साम्राज्य में कंगाली बढ़ती है। आबादी घट रही है, आपत्तियाँ बढ़ रही हैं। जब गरीबी बादशाह के घर तक पहुँच गई तो प्रजा की बात ही क्या है! सेना असन्तुष्ट है, व्यापारी पराजित हैं। मुसलमान नाराज हैं, हिन्दू दुःखी हैं। बहुत से लोग भूखे और निराश्रित रात-दिन सिर पीटते और रोते हैं।

सब सरदार—सच-सच ऐसा ही है, महाराज! आलमगीर के राज्य में तबाही-ही-तबाही है, किसी भी जानमाल व इज्जत सलामत नहीं है।

दीवान— (पढ़ते हुए) ऐसी कंगाल प्रजा से जो बादशाह भारी कर लेने में लीन हो गया है, उसका बड़प्पन कैसे

स्थिर रह सकता है ? पूर्व से पश्चिम तक यह कहा जा रहा है कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं के धार्मिक पुरुषों से द्वेष रखने के कारण ब्राह्मण से लेकर जोगी, वैरागी और संन्यासियों तक से जजिया लेना चाहता है। वह अपने तैमूर-वंश की प्रतिष्ठा का विचार न कर एकान्तवासी और गरीब साधुओं पर जोर दिखाना चाहता है। वे धार्मिक ग्रन्थ जिन पर आपका विश्वास है, आपको यही बतलाएँगे कि परमात्मा मनुष्य मात्र का ईश्वर है, न केवल मुसलमानों का। उसकी दृष्टि में मूर्तिपूजक और मुसलमान बराबर हैं। रंग का अन्तर उसकी आज्ञा से ही है। वही सबको पैदा करने वाला है। आपकी मस्जिदों में उसी का नाम लेकर लोग नमाज पढ़ते हैं और मन्दिरों में जहाँ मूर्ति के आगे घन्टे बजते हैं, उसी की प्रार्थना की जाती है। इसलिए किसी धर्म को उठा देना, ईश्वर की इच्छा का विरोध करना है।

पुरोहित गरीबदास—निश्चय ही ऐसा है।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'मतलब यह है कि आपने जो कर हिंदुओं पर लगाया है वह न्याय और सुनीति के विरुद्ध है, क्योंकि इससे देश दरिद्र हो जाएगा। इसके सिवा यह हिन्दुस्तान के कानून के खिलाफ नई बात है। यदि आपको अपने ही धर्म के आग्रह ने इस पर

स्थिर रह सकता है? पूर्व से पश्चिम तक यह कहा जा रहा है कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं के धार्मिक पुरुषों से द्वेष रखने के कारण ब्राह्मण से लेकर जोगी, वैरागी और संन्यासियों तक से जजिया लेना चाहता है। वह अपने तैमूर-वंश की प्रतिष्ठा का विचार न कर एकान्तवासी और गरीब साधुओं पर जोर दिखाना चाहता है। वे धार्मिक ग्रन्थ जिन पर आपका विश्वास है, आपको यही बतलाएँगे कि परमात्मा मनुष्य मात्र का ईश्वर है, न केवल मुसलमानों का। उसकी दृष्टि में मूर्तिपूजक और मुसलमान बराबर हैं। रंग का अन्तर उसकी आज्ञा से ही है। वही सबको पैदा करने वाला है। आपकी मस्जिदों में उसी का नाम लेकर लोग नमाज पढ़ते हैं और मन्दिरों में जहाँ मूर्ति के आगे घन्टे बजते हैं, उसी की प्रार्थना की जाती है। इसलिए किसी धर्म को उठा देना, ईश्वर की इच्छा का विरोध करना है।

पुरोहित गरीबदास—निश्चय ही ऐसा है।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'मतलब यह है कि आपने जो कर हिंदुओं पर लगाया है वह न्याय और सुनीति के विरुद्ध है, क्योंकि इससे देश दरिद्र हो जाएगा। इसके सिवा यह हिन्दुस्तान के कानून के खिलाफ नई बात है। यदि आपको अपने ही धर्म के आग्रह ने इस पर

उतारू किया है तो सबसे पहले रामसिंह से जो हिन्दुओं का मुखिया है, जजिया वसूल करें। उसके बाद मुझ शुभचिन्तक से। चींटियों और मक्खियों को पीसना वीर और उदारचित्त आदमी के लिए अनुचित है। आश्चर्य है कि आपको यह सलाह देते हुए, आपके मन्त्रियों ने न्याय और प्रतिष्ठा का कुछ भी विचार नहीं किया।'

सब सरदार—बहुत उत्तम ! बहुत उत्तम !

राणा— यह वह पत्र है जिसे मैं बादशाह को भेजना चाहता हूँ। अब आप लोग विचार कर बताएँ कि हमें क्या करना चाहिए—क्योंकि यह पत्र बादशाह की क्रोधाग्नि में घृत का काम देगा।

सब सरदार—महाराज, वह तो एक दिन हमें झेलना ही है, बादशाह मेवाड़ को नष्ट करने के लिए तुला बैठा ही है—फिर कल न सही आज ही सही। हमारी तलवारों ने मोर्चा नहीं खाया है। पत्र भेजा जाय।

राणा— तो सबकी यही राय है ?

सब सरदार—सबकी यही राय है।

राणा— तब यह पत्र ही रण-निमन्त्रण की पूर्णाहुति हो। दीवानजी, पत्र दिल्ली व्यवस्था के साथ भेज दिया जाय। साथ में दो तलवार—एक नंगी और दूसरी म्यान सहित।

दीवान— जो आज्ञा, दरबार !

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—दिल्ली के शाही महल के भीतर का नजर बाग : उदयपुरी बेगम अकेली टहल रही है। समय—सायंकाल।]

उदयपुरी बेगम—(स्वगत) बेंत खाकर जैसे कुत्ता दुम दबाकर भागता है, उसी तरह भाग आए ! कहते हैं, ये हैं शहन्शाहे आलम, शहनशाही की सारी शान धूल में मिल गई। मैंने कहा था, उस बाँदी से चिलम भरवाऊँगी। मगर कहाँ ? बादशाह की नाक को लातों से तोड़नेवाली वह मगरूर पाजी गँवारी काफिर लड़की शहनशाहे हिन्द को चरका देकर साफ निकल गई। सारी शहन्शाही शान धूल में मिल गई। (देखकर) वह बादशाह सलामत आ रहे हैं। (हंसकर) बन्दगी जहाँपनाह, फर्माइए वह बाँदी कहाँ है ? मुझे हुक्का भरवाने की बड़ी दिक्कत हो रही है।

बादशाह— इतमीनान रखो बेगम, बहुत जल्द वह बाँदी तुम्हारे हुजूर में हाजिर कर दी जाएगी। उसके बाद जी चाहे जितनी चिलम भरवाया करना।

उदयपुरी बेगम—वल्लाह, जहाँपनाह तो इस तरह फर्मा रहे हैं,

गोया सबकुछ हुजूर की ताकत ही में है।

बादशाह— मैं आलमगीर हूँ और मेरी ताकत का अन्दाजा लगाना औरतों का काम नहीं।

उदयपुरी बेगम—बजा है, एक अदना औरत कैसे शहन्शाहे आलम की ताकत का अन्दाजा लगा सकती है। शायद हुजूर की ताकत का अन्दाजा न लगा सकने पर ही उस काफिर गँवारिन लड़की ने हुजूर की नाक लातों से तोड़ी थी।

बादशाह— (गुस्से से) जमीन-ओ-आसमान पर जहाँ वह होगी, लाकर यहाँ हाजिर की जायगी और शहंशाह के साथ की गई गुस्ताखी की सजा पायगी।

उदयपुरी बेगम—सच है, फिलहाल तो हुजूर शायद मस्लहत से उससे शादी न कर बीच रास्ते ही से लौट आए।

बादशाह— मुझसे दगा की गई।

उदयपुरी बेगम—उम्मीद न थी कि वह गँवारिन ऐसी चालाक निकलेगी कि बादशाह आलमगीर को भी चरका दे जायगी।

बादशाह— मगर आलमगीर के गुस्से को बढाना आग से खेलना है।

उदयपुरी बेगम—(हँसकर) सुना है, इन राजपूत लड़कियों को आग से खेलने की खास कुदरत होती है। हाँ, तो क्या, यह सच है कि उस लड़की ने उदयपुर के

राणा से शादी कर ली।

बादशाह—सुना तो है।

उदयपुरी बेगम—और उसी साइत में, जिसमें हुजूर उससे शादी करने वाले थे।

बादशाह—उसी साइत में।

उदयपुरी बेगम—जहाँपनाह लाचार लौट आए। क्या इसी बूते पर हुजूर हिन्द पर हुकूमत करेंगे? भाइयों को कत्ल करके और बाप को कैद करके जो तख्त आपने गुनाहों की दलदल में फँसकर हासिल किया है, उसकी जड़ एक नाचीज गँवारी हिन्दू लड़की यों हिला डालेगी, मैंने यह नहीं सोचा था।

बादशाह—आलमगीर बदला लेगा। तुम देख लेना, वह सरकश बदवख्त उदयपुर का राणा आलमगीर के कदमों पर नाक रगड़ेगा। मैं मेवाड़ को जलाकर खाक कर दूँगा, एक भी गाँव, एक भी घर, एक भी इन्सान जिन्दा न बचने पाएगा। मैं औरत, बच्चों और बूढ़ों पर भी रहम न करूँगा। तमाम राजपूताने को ईंट-से-ईंट बजा दूँगा।

उदयपुरी बेगम—शायद आप यह कर सकेंगे। और वह मगरूर बाँदी?

बादशाह—वह जरूर रंगमहल में आकर तुम्हारी चिलम भरेगी।

[तेजी से जाता है]

[पर्दा गिरता है]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर का जनाना महल : महाराणा राजसिंह और चारुमती : समय—प्रातःकाल ।]

राणा— अब तुम्हारी क्या इच्छा है, राजकुमारी ! बादशाह से तो तुम्हारी रक्षा हो गई ।

चारुमती— (लजाकर) महाराज, जिस क्षत्रिय-कन्या को आपने हरण किया है, उसकी इच्छा क्या है ? जिसके लिए क्षत्रिय वीर क्षत्रिय-कन्या को हरण करते हैं—वही आपने किया ।

राणा— हमने अपनी इच्छा से तो तुम्हारा हरण किया नहीं । तुम्हारा पत्र पाकर शरणागत की रक्षा का कर्तव्य पालन किया है ।

चारुमती— महाराज, हरण की हुई कन्या की अन्यत्र गतिविधि कहाँ है ?

राणा— क्यों ? अब तुम रूपनगर जा सकती हो, विक्रमसिंह सच्चे क्षत्रिय हैं, वे तुम्हें सुखी से रखेंगे । फिर जहाँ तुम्हारी इच्छा होगी या उन्हें उचित प्रतीत होगा, तुम्हारा ब्याह कर देंगे ।

चारुमती— (आँसू भरके) महाराज, विपत्ति ने मेरी लाज-शर्म तो धो बहाई । अपना धर्म जैसे आप समझते हैं, उसी तरह अपना धर्म मैं भी समझती हूँ । मैंने जब

अपने को आपके अर्पण कर दिया और बड़ों ने आपकी गाँठ बाँध दी तो यह तन-मन आपका हुआ और अब क्या कहूँ।

राणा— परन्तु कुमारी, वह सब बातें तो विवश होकर की गई थीं। बादशाह से बचने की दूसरी राह नहीं थी। मेरा क्षत्रिय-धर्म और राजधर्म दोनों ही यह कहते हैं कि शरणागत से अनुचित लाभ न उठाया जाय।

चारुमती— तो महाराज क्या कहना चाहते हैं?

राणा— यही कि अब तुम रूपनगर जाओ और जैसा तुम्हारे गुरुजनों का आदेश हो, वह करो।

चारुमती— जैसी आपकी आज्ञा। आप मुझे रूपनगर भेजेंगे तो मैं वहीं चली जाऊँगी, परन्तु वहाँ जाने पर दिल्ली के दैत्य से मैं बच न सकूँगी। रूपनगर की शक्ति मेरी रक्षा न कर सकेगी, मुझे फिर महाराज की शरण लेनी पड़ेगी। परन्तु, अब मैं आपको व्यर्थ कष्ट न दूँगी, दिल्ली चली जाऊँगी।

राणा— दिल्ली क्या रंगमहल में जाओगी? ऐसा ही विचार था, तो पहिले ही क्यों नहीं गईं थीं।

चारुमती— पहिले सोचा था कि......खैर, जाने दीजिए।

राणा— कुमारी, यदि बादशाह की बेगम बनने का तुम्हारा इरादा हो गया है, तो मैं उसमें विघ्न न डालूँगा।

चारुमती— राजपूत-बाला के इरादे में विघ्न करने वाला वीर पृथ्वी पर कौन है। मैंने आपसे कहा था न कि मुझे एक और शक्तिशाली आसरा मिल गया है। इस बार मैं आपसे अधिक शक्तिशाली की शरण जाऊँगी।

राणा— वह शक्तिशाली कौन है?

चारुमती— यह विष। अन्त में राजपूत की बेटियों की यही तो गति होती है।

राणा— क्या अब विषपान करोगी, कुमारी?

चारुमती— और उपाय क्या है? आशा है, विष शरणागत को आपकी भाँति पीछे निराश्रय न करेगा।

राणा— मैं निराश्रय तो नहीं करता, कुमारी!

चारुमती— तब फिर रूपनगर में मेरा रक्षक कौन है?

राणा— तो फिर तुम यहीं रहो।

चारुमती— मेहमान बनकर या दासी बनकर!

राणा— (हँसकर) कुमारी, तुमसे जीतना कठिन है। मैं तुम्हारी वाचालता देखता था। अच्छा, तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो—जो चाहती हो वही बनकर।

चारुमती— (राणा के चरण छूकर) महाराज, आज ही से नहीं, जिस दिन मैंने आपकी तस्वीर देखी, उसी दिन से आपकी चरणदासी बन गई थी। आप सोचते होंगे, मेरे लिए बादशाह से रार ठनेगी। सो तो जो होना

था, हो चुका। महाराज का तेज-प्रताप बहुत बड़ा है। उससे टकरा कर मुगलों का दर्प चूर्ण हो जायगा।

राणा— मुगलों का मुझे कुछ भी भय नहीं है, कुमारी! तुम जैसी चतुर, रूप-गुणवती जिस राजा की भार्या हो—वह धन्य है। आओ, आज मैं मन-वचन से तुम्हें अपनी राजमहिषि बनाता हूँ।

चारुमती—(आँसू भरकर) महाराज! मैंने प्रतिज्ञा की थी कि आप यदि मुझे ग्रहण न करेंगे तो मैं राजसमुद्र में डूब मरूँगी।

राणा— प्रिये! अब मेरे मन की सच्ची बातें सुनो। तुमने केवल विपत्ति में फँसकर मेरी महिषी बनना चाहा था, इसी से हमने इतनी बातें कहीं। पर एक बात विचार कर हम यह उचित समझते हैं कि रूपनगर खबर भेजकर तुम्हारे गुरुजनों को बुलाकर उनके हाथ से तुम्हारा ग्रहण विधिवत् करें—यही हमारी इच्छा है। इसमें औचित्य भी है और धर्म भी।

चारुमती— आपका प्रस्ताव ठीक है। मैं भी उनका आशीर्वाद लेकर ही आपकी चरणदासी बनना चाहती हूँ।

[पर्दा बदलता है]

नवां दृश्य

[स्थान—उदयपुर का राजभवन : दुर्गादास और राणा राजसिंह परस्पर बातचीत कर रहे हैं। समय—सायंकाल।

दुर्गादास— महाराज! अब हमें कुछ न कुछ कर डालना चाहिए। यदि हम युक्ति से काम न लेंगे तो निकट भविष्य में जो हम पर भावी विपत्ति आ रही है, उससे हमारी रक्षा होना किसी भी भांति सम्भव नहीं है।

राणा— दुर्गादास, आपकी बातें विचार के योग्य हैं और आपकी युक्ति भी महत्वपूर्ण है। मैं स्वीकार करता हूँ कि हम अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर भी मुगल-साम्राज्य को नहीं उलट सकते।

दुर्गादास— इसी से महाराज, मैंने यह जाल रचा है। साम, दाम, दण्ड, भेद—यह तो राजनीति है। पहिले हमने शाहजादे मुअज्जम से यह प्रस्ताव किया था कि वह बादशाह के विरुद्ध बगावत का झण्डा खड़ा करे और हिन्दू-शक्तियों का सम्मान करे, तो राजपूतों की सम्मिलित शक्ति की सहायता से बादशाह बना दिया जाएगा।

राणा— फिर, क्या शाहजादा इस पर राजी हुआ?

दुर्गादास— पहिले वह राजी हो गया था। राव केसरीसिंह चौहान और सैनिक ने उससे बातचीत की थी, परन्तु

करने की जुर्रत की है और तलवार भेजकर चुनौती भी दी है।

वजीर— हुजूर, खत में तो ऐसा ही लिखा है।

बादशाह— और आप कहते हैं कि जो लड़का जसवन्तसिंह का बेटा कहकर हमारे सुपुर्द किया गया था, वह जाली था, जसवन्तसिंह का असल बेटा रानी के पास है।

वजीर— जी हाँ, हुजूर, ऐसा ही है।

बादशाह— मगर इस बात पर यकीन कैसे किया जा सकता है।

वजीर— पहिले मुझे भी यकीन न हुआ था। मगर जब सुना कि राना ने उसकी परवरिश के लिए भारी जागीर दी है तो यकीन करना पड़ा।

बादशाह— और आप कहते हैं कि राना को बार-बार लिखने पर भी उसने उस लड़के को वापिस देने में टाल-टूल की है।

वजीर— जी हाँ, हुजूर।

बादशाह— अकेला रूपनगर का मामला ही उस पर फौजकशी करने के लिए काफी था। इसके पेश्तर भी उसके खिलाफ बहुत-सी बातें सुनी गई हैं। अब अगर राजपूतों की इस दबंगता को न कुचला गया तो शाही तख्त का अमनो-अमान खतरे में पड़ जायगा, मारवाड़ और मेवाड़ की ताकतें मिलकर एक भारी फिसाद खड़ा करेंगी। उधर दक्षिण में मराठे चूहा

उछल-कूद मचा रहा है। इसलिए अब वक्त आगया है कि फौज-कशी की जाय। बस, मैं चाहता हूँ कि जल्द से जल्द फौज की तैयारी कर ली जाय।

वजीर— हुजूर, यह बहुत ही पेचीदा मामला है। वक्त बहुत नाजुक है, चारों तरफ दुश्मनों का जोर है। ऐसी हालत में जहाँपनाह का दारुल सल्तनत का छोड़ना खतरे से खाली नहीं।

बादशाह— आलमगीर हमेशा खतरे से खेल करने का आदी है। आप अभी अकबर को फरमान भेज दीजिए कि वह अपनी तमाम फौज लेकर अजमेर की ओर कूच करे और जल्द से जल्द हमारे वहाँ पहुँचने की उम्मीद रखे और आप आज से तीसरे दिन हमारे कूँच की तैयारी कर दें।

वजीर— जो हुक्म।

[जाता है]

पाँचवाँ अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—उदयपुर : महाराणा की राजसभा : युद्ध की मन्त्रणा हो रही है, समस्त सरदार हाजिर हैं। बीच में महाराणा राजसिंह विराजमान हैं।

राणा— आप सरदारगण आज एक बड़ी महत्वपूर्ण समस्या पर विचार करने एकत्र हुए हैं। इसी समस्या पर मेवाड़ के जीवन-मरण और प्रतिष्ठा का प्रश्न अवलम्बित है।

कुँवर जयसिंह—मेवाड़ अपनी प्रतिष्ठा की प्राण देकर रक्षा करेगा।

कुँवर भीमसिंह—और उसके प्राण महँगे दामों में बिकेंगे।

राणा— (मुस्करा कर) शान्त होओ कुँवर! अभी सब बातें सुन लो। आप लोग जानते हैं कि मुगल-शक्ति ने राजपूताने की वीरता को लोहा लगा दिया है। सभी राजपूत घराने अपना मान भूलकर केवल

शाही नौकरी बजाना ही नहीं प्रत्युत शाही हरम में अपनी पुत्रियों को बेगम बनाना भी अपने लिए शोभा की बात समझे बैठे हैं।

रावल जसराज—पर यह उनके लिए डूब मरने की बात है।

राणा— अकेला मेवाड़ ही ऐसा बचा है जिसने न तो बादशाह को बेटी दी और न स्वाधीनता।

राणावत भावसिंह—जब तक मेवाड़ में एक भी सीसोदिया है, वह ऐसा कभी न करेगा।

राणा— यह बात मुगल-बादशाहों को हमेशा खटकती रही है और समय-समय पर उन्होंने मेवाड़ को दलित करने में अपनी पूरी शक्तियों को आजमाया है। मेवाड़ की चौआ-चौआ जमीन वीरों के रक्त से रँगी पड़ी है और मेवाड़ को कभी सुख की नींद सोना नसीब नहीं हुआ। मेवाड़ की न जाने कितनी कुलाङ्गनाएँ अपने उठते अरमान हृदय में लिए जलकर राख हो चुकी हैं। (आँसू भर आते हैं)

महाराज मनोहरसिंह—(आवेश में) आज भी मेवाड़ में उत्सर्ग और वीरता के भाव जीवित हैं और आवश्यकता पड़ने पर मेवाड़ वैसा ही जौहर दिखाएगा जैसा उसके पूर्वजों ने दिखाया है।

राणा— मेवाड़ पर शाही नाराजी के ये पुराने कारण तो हैं ही, अब और नए कारण भी पैदा हुए हैं।

महाराज दलसिंह—नए कारण कौन-कौन हैं, हम सुनना चाहते हैं।

राणा— (मुस्कराकर) सुनिए, इसीलिए आप लोगों को इकट्ठा किया गया है। हमने शाही आज्ञा की बिना परवाह किए अपने खोए हुए वे परगने दखल कर लिए जिन्हें बादशाह शाहजहाँ ने जब्त कर लिया था।

महाराज अरिसिंह—वे परगने हमारे थे। बादशाह ने अन्याय से उन्हें जब्त किया था।

राणा— प्रसिद्ध है कि आलमगीर देवमन्दिर ढहाने में अपने सब पूर्ववर्ती बादशाह से बाजी ले गया है। वह बादशाह पीछे है, पहिले कट्टर धर्मान्ध मुल्ला है। जब वह गुजरात का सूबेदार था तब उसने अहमदाबाद का चिन्तामणि का मन्दिर गिरवाकर उसके स्थान पर मस्जिद बनवाई थी, और भी गुजरात के कई मन्दिर ढहवा दिए थे। अभी कुछ दिन पूर्व उसने राज्यभर के सब पुराने मन्दिरों को तोड़ डालने और पाठशालाओं को बन्द कर देने का हुक्म दिया है और धर्म-सम्बन्धी पठन-पाठन रोक दिया है। काठियावाड़ के सोमनाथ, काशी के विश्वनाथ, मथुरा के केशवराय के प्रसिद्ध मन्दिरों को विध्वंस करके वहाँ मस्जिदें बनवा दी हैं। उसने राज्यभर के मन्दिरों और धर्मस्थानों को नष्ट करने को एक

महकमा कायम किया है और अब तक हजारों मन्दिर विध्वंस कर चुका है। जब उसने गोवर्धन के वल्लभ-सम्प्रदाय के द्वारिकाधीश के मन्दिर पर शनिदृष्टि की तो गोस्वामियों ने मेवाड़ की शरण ली और कांकरौली में उसकी स्थापना की गई। इसी भाँति गोवर्धन स्थित श्रीनाथ की मूर्ति को जब लेकर गोस्वामी बूँदी, कोटा पुष्कर, किशनगढ़, जोधपुर गए, पर किसी ने आश्रय नहीं दिया। अन्त में, गोसाई को मैंने वचन दिया कि मूर्ति को मेवाड़ में ले आओ। मेरे एक लाख सीसोदियों का सिर काटने पर ही औरंगजेब उसे विध्वंस कर सकता है। और वह सीहोर में स्थापित कर दी गई है।

झाला चन्द्रसेन—जय हिन्दूपति, हिन्दूसूर्य महाराणा की। महाराज का यह कार्य मेवाड़ की प्रतिष्ठा के योग्य ही हुआ है।

राणा— फिर हमने धर्म-संकट में पड़कर बादशाह की मंगतेर रूपनगर की राजकुमारी चारुमती का हरण करके उसे नाराज कर दिया, क्योंकि राजपूत-बाला ने शरण चाही थी।

रावत केसरीसिंह—यह तो क्षत्रियोचित कार्य ही हुआ है।

राणा— परन्तु सबसे अधिक नाराजी तो बादशाह के मन में मेरे उस खत से हुई है जो मैंने जजिया के विरुद्ध

उसे लिखा है और उसे चुनौती दी है कि पहिले वह मुझसे यह कर ले। यह अपमानजनक कर बादशाह अकबर ने बन्द कर दिया था। सौ वर्ष पीछे अब औरंगजेब ने इसे जारी कर सख्ती के साथ वसूल किया है, जो न्याय और नीति के विरुद्ध है। राजपूताने में कौन था जो हिन्दुओं के इस अपमान से उन्हें बचाने की आवाज उठाता। लाचार हो, मुझे ही मुँह खोलना पड़ा।

रावत रत्नसेन—घणी खम्मा अन्नदाता, यह काम आप ही के योग्य था।

राणा— सरदारो, बादशाह को नाराज करने के लिए यही कारण काफी थे, पर मैं एक और भारी अपराध कर बैठा। मारवाड़पति वीर महाराज जसवन्तसिंह को जमरूद के थाने में बादशाह ने मरवा डाला। जब उनकी विधवा रानी और कुँवर जोधपुर लौट रहे थे, बादशाह ने जोधपुर को खालसा कर लिया और रानी तथा कुँवर को दिल्ली आने का हुक्म दिया। बादशाह की नीयत खराब देख रानी कुँवर को लेकर वहाँ से भाग निकली और मेवाड़ की शरण ली। दुर्गादास राठौर ने मुझसे सब हकीकत कही। मुझे मारवाड़ के भावी राजा को आश्रय देना पड़ा। फिर बादशाह के बारम्बार लिखने पर भी मैंने

उन्हें न दिया।

राव केसरीसिंह—हम मर मिटेंगे, पर शरणागत की रक्षा करेंगे।

राणा— सरदारो, हमारे इन्हीं सब अपराधों का दण्ड देने और हमसे जजिया वसूल करने प्रतापी आलमगीर भारी सेना लेकर हम पर चढ़ आया है और अजमेर में छावनी डाली है। तथा एक बड़ी सेना के साथ शाहजादा अकबर को इधर रवाना किया है। इसलिए अब झटपट हमें अपने कर्तव्य को सोच लेना चाहिए।

सब सरदार—कर्तव्य हमने सोच लिया है। हम युद्ध करेंगे और बादशाह के दांत खट्टे करेंगे।

पुरोहित गरीबदास—आज्ञा पाऊँ तो निवेदन करूँ। बादशाह के पास सेना बहुत है, और साथ में फिरंगियों का तोपखाना भी है। इसलिए बराबरी का युद्ध करना ठीक नहीं है। महाराणा प्रतापसिंह और उदयसिंह ने भी ऐसा ही किया था। वे आक्रमण के समय नगर छोड़ पहाड़ों में चले गए थे। अवसर पाते ही मुगलों पर छापा मारते और शत्रुओं के दांत खट्टे करते थे। इसी से बादशाह को परास्त होना पड़ा था। महाराणा अमरसिंह ने भी यही नीति ग्रहण की थी। इसलिए आप भी यही नीति ग्रहण करें और दुर्गम अरावली की सहायता से शत्रु पर विजय

प्राप्त करें।

राणा— राजपुरोहित का विचार बहुत उत्तम है। हमें विश्वास है कि हम शत्रु को पहाड़ी घाटियों में घेर कर भूखों मार डालेंगे। उधर हम शाही मुल्क को भी लूट कर बर्बाद करेंगे।

झाला जसवन्तसिंह—अन्नदाता का विचार अति उत्तम है।

राणा— इस समय हमारे पास २० हजार सवार और २५ हजार पैदल हैं। इसके सिवा ५० हजार भील हमारे साथ हैं। उनके अलावा पानवाड़ा-मेरपुर, जूड़ा और जवास के भोमिए सरदार, पालों के मुखिया हमारे मददगार हैं। मेरी योजना है कि ५० हजार भील-वीर मेवाड़ के समस्त पहाड़ी नाकों और घाटों में दस-दस हजार की टुकड़ी में छिपकर बैठें और ज्यों ही दुश्मन की रसद, बारदाना व खजाना जाते देखें, लूट कर हमारे पास पहुँचा दें। उदयपुर और सब बस्तियों की प्रजा नगर खाली करके पहाड़ों में चली जाय। हमारी कुल फौजों के तीन हिस्से होंगे। एक भाग कुँवर जयसिंह की अधीनता में पहाड़ की चोटी पर स्थित रहेगा। दूसरे भाग को लेकर कुँवर भीमसिंह पश्चिम मोर्चे पर डटेंगे और अवसर पाते ही मालवा और गुजरात के शाही इलाकों को लूट खाएँगे। सेना का तीसरा भाग हमारे अधीन

रहेगा और हम देवरी की घाटी की चौकी देंगे।

सब सरदार—यह योजना बहुत उत्तम है।

राणा— अब सब सरदार अपनी-अपनी सेनाएँ सजा करके कल प्रातःकाल देवी माता के पहाड़ों में जमा हो जाएँ क्योंकि समय कम है।

सब सरदार—जो आज्ञा।

[सब जाते हैं]

[पर्दा बदलता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—उदयपुर: शाहज़ादा अकबर की छावनी: शाहज़ादा अकबर और उसके सरदार लोग: समय—सायंकाल]

अकबर— बड़े ही ताज्जुब की बात है कि रास्ता, बाग, वन, बगीचा, सरोवर सब जगह सन्नाटा है। शहर जैसे जादू के जोर से सो गया है। कहिए हसनअली साहेब, क्या आपको शहर में कोई आदमी मिला?

हसनअली—एक चिड़ी का पूत भी नहीं। मैंने खुद घूमकर सब तरफ देख लिया।

अकबर— आपका क्या ख्याल है? मुल्क के सब बाशिन्दे क्या हुए?

हसनअली—जाहिरा ऐसा मालूम होता है, हमारी फौज को

देखकर सब डरकर जंगलों में भाग गए हैं।

अकबर— तब उन पहाड़ी चूहों से जंग किस तरह किया जाएगा।

हसनअली—जंग की जरूरत ही क्या है। तमाम मुल्क, शहर, गाँव, हलके, किले हमारे हाथ में आ ही गए। मुल्क फतह हो गया। बस बैठे चैन की बंशी बजाइए।

अकबर— यह भी ठीक है। मगर सोचना यह है कि क्या मुल्क फतह हो गया!

हसनअली—इसमें भी शक है। शाहजादा साहेब खुद उदयपुर में मुकीम हैं, तमाम मुल्क में हमारी फौज फैल गई है। मेरा तो खयाल ऐसा है कि हम चारों तरफ थाने बैठाते हुए तमाम मुल्क और किलों को शाही दखल में करते जाएँ।

अकबर— यही किया जाय। अब आप १० हजार फौज लेकर उसकी अलग-अलग २ टुकड़ियाँ बनाकर हर ओर से दुश्मन को घेर लें और मुल्क के भीतरी हिस्सों में घुसते जाएँ।

हसनअली—दुश्मन को घेरना तो नामुमकिन है। हाँ, सूने गाँव, उजाड़ खेत, सूखे हुए कुओं और बर्बाद रास्तों को घेर लिया जाएगा। मगर एक मुश्किल है।

अकबर— वह क्या?

हसनअली—अगर बाहर से रसद न मिली तो सिपाही और

घोड़े भूखे-प्यासे मर जाएँगे। सबसे बड़ी बात चारे और पानी की है। मुल्कभर में न एक बूँद पानी है, न एक तिनका चारा।

अकबर— पानी के लिए नए कुएँ खुदवा दिए जाँय।

हसनअली—यह बहुत ही मुश्किल है। इन पहाड़ी जगहों में पहले तो बड़ी गहराई तक पानी मिलना ही मुश्किल है, फिर कहीं-कहीं तो कुएँ खुद भी नहीं सकते। दूर-दूर कोई नदी-नाला भी नहीं है। फिर चारे के लिए कोई चारा नहीं है। सिपाहियों का राशन अगर रोक दिया गया, तो बेमौत मरे।

अकबर— तब आप किस खयाल से फर्मा रहे थे कि मुल्क फतह हो चुका जंग की जरूरत नहीं।

हसनअली—मैं यही कह रहा था, कि कोई नजर आए तो लड़ाई की जाए। अब लड़ें तो किससे?

अकबर— बड़ा ही पेचीदा मामला दरपेश है। मैं गौर करूँगा। अभी आप अपनी टुकड़ियों को इधर-उधर पानी और चारे की तलाश में भेजें। जो चीज जहाँ मिले जब्त कर ली जाय। मन्दिर ढहा दिए जाँए, गाँव फूँक दिए जाँय, जानवर और आदमी जो मिलें कत्ल कर दिए जाँय। एक बार इस खौफनाक मुल्क को पूरी तौर पर पामाल कर देना पड़ेगा।

हसनअली—बहुत खूब।

[जाता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—अजमेर : आनासागर की पाल : बादशाह औरङ्गजेब की छावनी : शाही खेमे में बादशाह और उसके अमीर परामर्श कर रहे हैं। समय—प्रातःकाल।]

बादशाह— अकबर ने क्या पैगाम भेजा है ?

तहव्वुरखाँ—जहाँपनाह, मेवाड़ को फतह करने में बड़ी-बड़ी मुश्किलें दरपेश हैं।

बादशाह— वे कौन-सी मुश्किलें हैं जिन्हें शाही फौज को पूरा करने में दिक्कतें आती हैं ?

तहव्वुरखाँ—खुदावन्द, पहिली बात तो यह कि मेवाड़ के शाही थाने एक-दूसरे से बहुत दूर हैं और उनके बीच-बीच में अरावली की पहाड़ियाँ आ गई हैं जिनके ऊपरी हिस्सों पर राणा का कब्जा है। वह वहाँ से मौका पाते ही चीते की तरह पूरब या पश्चिम से हमारी फौज पर आ टूटता है और फौज को काट-कूट और छावनी को लूट-लाट कर फिर पहाड़ पर जा छिपता है।

बादशाह— (भौं सिकोड़ कर) और ?

तहव्वुरखाँ—फिर मेवाड़ का पहाड़ी इलाका-उदयपुर से पश्चिम में कुम्भलगढ़ तक और राजसमुद्र से दक्षिण में सलूम्बर तक एक तरह से निहायत मजबूत किले

के जैसा है जिसमें घुसने के लिए सिर्फ ३ नाले हैं, उदयपुर, राजसमुद्र और देसूरी।

बादशाह— (बेचैनी से) शाही फौज की कैफियत क्या है?

तहव्वुरखाँ—उसके सामने दिक्कत यह है कि चित्तौड़ से मारवाड़ जाने के लिए उसे बदनौर-सोजत और ब्यावर होकर लम्बा और ऊबड़-खाबड़ उजाड़ रास्ता तै करना पड़ता है—जिसमें न कहीं पानी है और न चारा। तिस पर एक और आफत है।

बादशाह— वह क्या?

तहव्वुरखाँ—इस रास्ते के तमाम नाकों और घाटों पर ५० हजार भील तीर-कमान लिए तैनात हैं जो छिप-कली की तरह पहाड़ पर चढ़ और उतर सकते हैं और जिनका निशाना अचूक होता है।

बादशाह— शाही फौज को और क्या दिक्कतें हैं?

तहव्वुरखाँ—जहाँपनाह, इस मुसीबत के अलावा—उसे रसद की बड़ी ही दिक्कत है। ज्यों ही मुल्क के भीतरी हिस्सों में फँसी शाही फौज को रसद भेजी जाती है—वह आनन-फानन लूट ली जाती है। मुल्क के भीतरी हिस्से की तमाम फसल बर्बाद कर दी गई है। गाँव और बस्तियाँ उजाड़ दिए गए हैं। कुएँ और तालाब पाट दिए गए हैं। मुल्कभर में न घोड़ों को चारा-पानी मिलता है, न सिपाहियों को खाना।

बादशाह— बहुत खूब। अब हमारी तजवीज यह है कि तमाम पहाड़ी इलाके को घेर कर देसूरी, उदयपुर और राजसमुद्र के घाटों से भीतर घुसा जाय।

तहव्वुरखाँ—जो इर्शाद।

बादशाह— शाहजादा मुहम्मद अकबर को उदयपुर के मुहाने पर तैनात होने का फर्मान भेज दिया जाए और उसकी मदद को हसनअलीखाँ शुजातखाँ, और रजीउद्दीनखाँ रहें। उनके साथ ५० हजार फौज और फिरंगियों का तोपखाना भी जाए।

तहव्वुरखाँ—बहुत अच्छा जहाँपनाह!

बादशाह— और तुम देवारी के घाट का दखल कर लो। साथ ही मांडल वगैरा परगनों को भी शाही दखल में लेकर थाने बैठा दो।

तहव्वुरखाँ—जहाँपनाह की जैसी मर्जी।

बादशाह— हम खुद जल्द राजसमुद्र के मोर्चों पर जाएँगे। सादुल्लाखाँ को लिख दो कि अपनी फौज के साथ वहाँ हमारा इन्तजार करे।

तहव्वुरखाँ—बहुत खूब, मगर जब दुश्मन सामने आता ही नहीं तो लड़ाई कैसे होगी?

बादशाह— मुल्क को चारों तरफ से घेर कर मुल्क के भीतरी हिस्सों में घुसते ही चले जाओ और तमाम मेवाड़ को पामाल करके, शाही थाने बैठाते चले जाओ।

जहाँ दुश्मन नजर आए, काट डालो। आखिर वह कहाँ पनाह लेगा? तमाम मेवाड़ को कुचल कर बर्बाद कर दो, कि फिर यह सिर न उठा सके।

तहव्वुरखाँ—जो हुक्म जहाँपनाह!

बादशाह— सुनो, तमाम सिपहसालारों को हुक्म भेज दो कि जहाँ जो मन्दिर-शिवाला नजर आए, जमींदोज कर दिया जाय। गाँव जलाकर खाक कर डाले जाँय और औरत-मर्द जो मिले, कत्ल कर डाला जाए।

तहव्वुरखाँ—जो हुक्म!

[जाता है]

बादशाह— (स्वगत—हाथ मलता हुआ) इस बार मैं इन मगरूर राजपूतों से निपट लेना चाहता हूँ। चित्तौड़ जब तक राजपूताने की छाती पर सिर उठाए खड़ा है, मुगलों का जलाल फीका है। जन्नतनशीन अकबर शाह से लेकर अब तक इसे कब्जा करने की तमाम कोशिशें बेकार गईं। इस बार मैं मेवाड़ को खतम कर दूँगा। आलमगीरी कहर से वह बच न पाएगा।

[पर्दा बदलता है].

चौथा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : शाहजादा अकबर की छावनी : समय—रात्रि]

अकबर— आप यह कहते क्या हैं, जनाब !

तहव्वुरखाँ—जो कहता हूँ, बिल्कुल सच है। आज नौ रोज से हसनअलीखाँ और उनकी फौज का पता नहीं।

अकबर— फौज को क्या साँप सूँघ गया या जमीन निगल गई !

तहव्वुरखाँ—खुदा जाने, तिस पर खुदा की मार, मालवे से मन्दसौर और नीमच के रास्ते १० हजार बैलों पर बजारे रसद ला रहे थे। वे सब रास्ते में भीलों ने लूट लिए।

अकबर— लूट लिए ? इसके माने यह कि हमें कल से भूखों मरना होगा !

तहव्वुरखाँ—यकीनन, क्योंकि अब रसद कतई नहीं है। न कुओं और तालाबों में पानी है।

अकबर— (हाथ मलकर) तो हम चूहेदानी में बन्द चूहों की तरह मरेंगे ? आप अभी नाके-नाके पर थाने बैठाइए और हसनअली की फौज की तलाश कीजिए।

तहव्वुरखाँ—कोई शाही अफसर थानेदारी कुबूल नहीं करता, क्योंकि दुश्मन बाज की तरह टूटकर थानों को लूट कर और मार-काट करके न जाने कहाँ भाग जाते हैं !

अकबर— आप खुद घाटों और दर्रों में फौजों की टुकड़ियां भेजिए।

तहव्वुरखां—बेकार! फौज घाटियों और दर्रों में जाने से इन्कार करती है। उसकी हिम्मत बिल्कुल टूट गई है। एक मुसीबत और है।

अकबर— वह क्या?

तहव्वुरखां—चित्तौड़ के आस-पास के सब थाने टूट चुके हैं और राजपूतों ने पहाड़ों से निकलकर बदनौर तक अपनी फौजें फैला दी हैं, इससे अजमेर से हमारा ताल्लुक टूटने का पूरा अन्देशा है। फौज बे-सरो-सामान, थकी हुई, बे-सिलसिले, भूखी और प्यासी है!

[एक सिपाही घबराया हुआ आता है]

सिपाही— खुदावन्द, दुश्मनों की फौज ने छावनी पर हमला किया है।

अकबर— (खड़ा होकर) तहव्वुरखां! आप फौरन फौज की मोर्चेबन्दी करें। मैं अभी आता हूं।

तहव्वुरखां—बहुत खूब!

[जाता है]

[पर्दा गिरता है]

पांचवां दृश्य

[स्थान—देवरी की घाटी : एक पहाड़ की तलहटी में शाही छावनी पड़ी है। फौजदार-नायब इक्कालाजखां और उनके दो मुसाहिब पीरबख्श और मियां कमरुद्दीन अगल-बगल बैठे हैं। नायब साहेब मसनद पर बैठे पेचवान पी रहे हैं। एक खिदमतगार मोढ़ा लिए सामने खड़ा है। नायब साहेब पेचवान पर अम्बरी तम्बाकू पी रहे हैं। दो-चार सिपाही इधर-उधर खड़े हैं। फासिले पर लड़ाई का शोर-गुल हो रहा है।]

नायब— कहो मियां पीरबख्श, इस वक्त अगर दुश्मन यहां आ जाय तो तुम क्या करोगे ?

पीरबख्श—जनाब मजाल है ?

नायब— ताहम।

पीरबख्श—तो मैं उन्हें कच्चा ही चबा जाऊं।

नायब— बहुत खूब, और तुम मियां कमरुद्दीन !

कमरुद्दीन—क्या मैं ? मैं उन्हें इतनी गालियां दूं, इतनी गालियां दूं कि बच्चूजी को छठी का दूध ही याद आजाय।

नायब— यह भी ठीक है। तुम्हारे जैसे बहादुर मुसाहिबों के पास रहते फिर गम किस बात का ! मगर खैर, एह-तियातन हमारी तलवार म्यान से बाहर निकाल कर हमारे पास रख दो और बन्दूक-तमंचा भर कर

तैंस कर लो।

खिदमतगार—(तलवार नंगी पास रखकर) जो हुक्म बन्दा नवाज। (बन्दूक मे गज डालता है) उसमें से मिट्टी निकलती है।

नायब— वाह, बन्दूक में से मिट्टी कैसे निकली?

खिदमतगार—हुजूर, इसमें दीमक ने घर कर लिया है।

पीरबख्श—दीमक का भी क्या कलेजा है!

कमरुद्दीन—और अगर गोली लग जाय तो?

नायब— मियाँ पीरबख्श, तुम बन्दूक का निशाना लगा सकते हो?

पीरबख्श—हुजूर, अपने मुँह से क्या कहूँ। एक बार कुत्ते से हमारी लाग-डाट हो गई। खुदा की कसम, हमसे कोई ११-१२ कदम पर था। घर के जो बन्दूक दागता हूँ तो पों-पों करके भागता ही नजर आया।

नायब— (हँसकर) क्या कहने हैं, बड़े ही बहादुर हो!

पीरबख्श—हुजूर, इतनी इज्जत न करें, गुलाम जरा इस वक्त रंज में है—सोचता हूँ कि हुसैनी की माँ……।

नायब— ओह, वह मजे में पुलाव पका रही होगी। हाँ, जरा बन्दूक देना। (खिदमतगार बन्दूक देता है। उसे उलट-पुलट कर देखने के बाद धीरे से नीचे रख देता है)

नायब— उड़ती चिड़िया पर निशाना लगा सकते हो?

पीरबख्श—हुक्म हो तो आसमान को भून कर रख दूँ?

नायब— चिड़िया पर निशाना लगाम्रो।

पीरबख्श—(रोनी सूरत बना कर ग्रौर जमीन में ठोकर मार कर गजल गाता है)

क्या हाल हो गया है, दिले बेकरार का।
आजार हो किसी को इलाही न प्यार का।
मशहूर है जो रोजे कयामत जहान में।
पहला पहर है मेरी शबे इन्तजार का।

(खूब जोश में सम ठोक कर)

इस साल देखना मेरी वहशत के चुलबुले।
आया है धूम-धाम से मौसम बहार का।

(नाचने लगता है)

[एक सिपाही दौड़ता हुआ आता है]

सिपाही— हुजूर, दुश्मनों ने परे के परे साफ कर दिए। हमारी फौजें हार कर भाग रही हैं।

नायब— ऐं ? यह क्या बदकलाम जबान पर लाया। (मुसाहिबों से) क्या यह मुमकिन है ?

कमरुद्दीन—हुजूर, कतई नामुमकिन।

नायब— (एक कश पेचवान का खींचकर) वही तो मैंने कहा (सिपाही से) खैर तुम जाओ।

[सिपाही जाता है]

[दूसरा घबराया सिपाही आता है]

सिपाही— हुजूर गजब हो गया, दुश्मन की फतह हो गई। वे

इधर ही बढ़े आ रहे हैं। भागिए हुजूर, जान बचाइए!

[दोनों मुसाहिब घबराकर उठ खड़े होते हैं। शोर-गुल बढ़ता है। बहुत से सवार नंगी तलवारें लिए सब को घेर लेते हैं]

नायब— .(घबरा कर) म्याँ पीरबख्श, सम्हालिए जरा, ये बेग्रदब गधे सर पर ही चढ़े चले आ रहे हैं। लाओ, हमारी बन्दूक, तमंचा, तलवार!

पीरबख्श—हुजूर, वक्त पर हमें आजमाइए, पर यह मौका तो बेढब है।

[भागता है]

नायब— मियाँ कमरुद्दीन, दागो गोली धर के, उड़ा दो सब को, भून डालो म्याँ? बन्दूक लो बन्दूक!

कुमार भीमसिंह—पकड़ लो, गिरफ्तार कर लो, जो लड़े उसके दो टूक कर दो।

नायब— किसको? क्या हमको? हम —

कमरुद्दीन—हुजूर, अब इन जंगलियों को कौन समझाए। अभी कहते हैं, दूर रहो, अदब से बातें करो। वरना नायब साहेब बिगड़ गए तो कयामत बर्पा हो जायगी।

एक राजपूत सिपाही—(सिर पर धौल जमाकर) चलो ठण्डे-ठण्डे। राणाजी के सामने तुम्हारा सिर काटा जायगा।

[धक्का देते हुए ले जाते हैं]

[पर्दा गिरता है]

छठा दृश्य

[स्थान—राणा राजसिंह की छावनी : राणा और चुने हुए सरदार युद्ध-मन्त्रणा कर रहे हैं]

राणा— हाँ तो अब बादशाह की दूसरी युद्ध-योजना यह है कि शाहजादा आजम चित्तौड़ से देबारी और उदयपुर होता हुआ पहाड़ों में बढ़े, इसी तरह शाहजादा मुअज्जम राजनगर और अकबर देसूरी से ?

गोपीनाथ राठौर—जी हाँ अन्नदाता !

राणा— बहुत ठीक। अकबर अब सोजत में मुकीम है ?

गोपीनाथ राठौर—जी हाँ।

राणा— यहाँ से वह एक सेना नाडोल होकर तहव्वुरखाँ की कमान में देसूरी के घाटी से मेवाड़ में भेजेगा और

पहिले कुम्भलमेर पर आक्रमण करेगा।

गोपीनाथ राठौर—जी हाँ, वहीं राठौरों की सेना पड़ी हुई है।

राणा— हम आशा करते है कि तहब्बुर एक मास से पूर्व नाडोल न पहुँच सकेगा। आप तुरन्त कुम्भलमेर अपनी सेना सहित मोर्चा दुरुस्त कीजिए और दुर्गादास को मदद कीजिए। विक्रम सोलंकी और मोहकमसिंह शक्तावत आपके साथ रहेंगे। पर खबरदार रहिए, तहब्बुर की सेना अकबरकी सेना से न मिलने पावे। उसे पहिले ही रास्ते में काट फेंकना चाहिए।

गोपीनाथ राठौर—ऐसा ही होगा।

राणा— युक्ति ऐसी करनी चाहिए कि आप तीनों सेनापति मार्ग में एक-दूसरे के नजदीक ही छिप रहें। हाँ, विक्रमसिंहजी के पास दो हजार सवार हैं?

विक्रमसिंहजी—जी हाँ।

राणा— बहुत ठीक, आप पहाड़ पर न चढ़ सकेंगे। आप सब से पीछे रहें और कहीं समतल भूमि पर जंगल में छिप रहें। धूर्त मुगल धरती सूँघते बढ़ेंगे। उन्हें हमारा भय छाया है। सम्भव है, आपको पा जाँय तो आप नाम मात्र को लड़कर पीछे हट जाइए। जब शत्रु आगे बढ़ जाय, तो उसकी पीठ तोड़ने को तैयार रहिए।

विक्रमसिंहजी—ऐसा ही होगा।

राणा— और आप गोपीचन्दजी, दर्रे के सब से सकरीले रास्ते पर दबकर बैठ जाँय। मोहकमसिंहजी बीच में छिपे रहेंगे। शत्रु से कुछ छेड़छाड़ न करेंगे। ज्योंही शत्रु दर्रे के मोर्चे पर पहुँचे, आप काट शुरू कर दें। बगल से पहाड़ीबाज की तरह झपटकर मोहकमसिंहजी जनेऊआ हाथ मारेंगे और पीछे से विक्रमसिंह। दुश्मन वहीं कट मरेगा।

तीनों— ऐसा ही होगा महाराज।

राणा राजसिंह—अकबर की असफलता सुनकर लाचार बादशाह स्वयं अजमेर से चल पड़ेगा। हमें मालूम है, उसके पास फौज बहुत कम है। यहाँ की तमाम फौज बेतरतीबी से बिखरी हुई है। वह जल्दी और गुस्से में देश में घुसता ही जायगा। हम उसे पीजरे में फांस कर खतम कर देंगे। अब जाइए, आप अपनी योजना काम में लाइए।

सब— जैसी आज्ञा। [सब जाते हैं]

[पर्दा बदलता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान — उदय सागर : बादशाह की छावनी : बीच में बादशाह का खेमा है। सन्तरी पहरे पर हैं। बादशाह मसनद पर बैठे हैं। अमीर सब हाजिर हैं।]

बादशाह— अकबर से मुझे ऐसी उम्मीद न थी। उस नामुराद ने अपना नाम डुबोया।

तहव्वुरखाँ—जहाँपनाह, शाहजादा जो कुछ कर सकते थे वह उन्होंने किया। मगर उन्हें बंगाल और दक्षिण की शाही फौज की मदद नहीं मिली।

बादशाह— इसके लिए कौन जिम्मेदार है ?

तहव्वुरखाँ—हुजूर मदद मिलना मुमकिन ही न था, राना बीच में इस चालाकी से जम कर बैठा कि लाचार शाही फौज सिकुड़ी बैठी रही। केमार जयसिंह ने आधी रात को एकाएक फौज पर टूट कर शाहजादे की तमाम फौज को काट डाला।

बादशाह— काट डाला ! शाही फौज गोया मूली थी।

तहव्वुरखाँ—हुजूर, उसे न रसद मिलती थी न कुमुक। और घबराहट से उसकी हिम्मत पस्त हो चुकी थी।

बादशाह— तो शाहजादा अकबर अब गुजरात की ओर गया है।

तहव्वुरखाँ—जी हाँ, जहाँपनाह, उनकी तमाम फौज बर्बाद हो गई है। उधर शाहजादा आज बड़ी मुसीबत में है।

बादशाह— उन पर कैसी मुसीबत आई है ?

तहव्वुरखाँ—वे पहाड़ी इलाकों में जहाँ तक पहुँच चुके हैं, वहाँ से आगे बढ़ने का रास्ता ही नहीं है। घोड़े, ऊँट, तोपखाना आगे एक कदम भी बढ़ नहीं सकता।

वहाँ न रसद है न पानी, न दुश्मन, जिनसे लड़ा जाय। शाहज़ादा ने कुछ पैदल और चुने हुए सवार लेकर घाटियों के रास्ते भीतर घुसने की कोशिश की थी मगर ज्योंही घाटियों में घुसे ऊपर से राणा की छिपी हुई फौज बड़े-बड़े पत्थर बरसा कर फौज की चटनी बना देती है। उनकी हालत ऐसी ही है जैसे कोई कुत्ता बावर्चीख़ाने का बन्द दर्वाजा भड़भड़ा कर फिर वापस लौट आता है, भीतर नहीं घुस पाता। उधर मोज्ज़मशाह कांकरौली में अटके पड़े हैं।

बादशाह— किसलिए ?

तहव्वुरख़ाँ—पहले तो उनकी फौजों को आगे बढ़ने को राह ही नहीं है। दूसरे, वह रास्ता बनाकर आगे बढ़े भी तो एक तो यह बहुत ही मुश्किल काम है। दूसरे, उन्हें बड़ा भारी एक ख़तरा है।

बादशाह— ख़तरा क्या है ?

तहव्वुरख़ाँ—यह, कि अगर पीछे से राजपूतों ने उनको रसद का रास्ता रोक दिया तो कैसी बीतेगी ? राणा ने इस चालाकी और होशियारी से अपने पड़ाव डाले हुए हैं कि बगाल और दक्खिन की शाही फौजें भीगे बन्दर की तरह सिकुड़ कर बैठी रहीं और मुलतान की फौज बेदस्तापूर होगई। कुछ भी मदद न मिल

मको। अब शहनशाह जैसा मुनासिब समझें, हुक्म दें।

बादशाह— तुम अभी अपनी फौज के साथ कूँच करके अकबर को वापस लाकर चित्तौड़ में छावनी डालो। हम खुद इस बार मुल्क के भीतरी हिस्से में घुसेंगे और देखेंगे कि राना में कितना जोर है।

तहव्वुरखाँ—जो हुक्म बन्दा नेवाज। [जाता है]

[पर्दा बदलता है]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—मुगलों का पड़ाव · शाहजादा अकबर और तहव्वुरखाँ : समय—प्रात:काल]

तहव्वुरखाँ—शाहजादा, अब कहिए क्या किया जाय ?

अकबर— मेरा खयाल है, कुछ भी नहीं किया जा सकता। हम लोग पूरी तौर पर हार गए हैं और हमारी फौज बिलकुल बर्बाद हो गई है।

तहव्वुरखाँ—राजपूतों की जवाँमर्दी, बहादुरी और मुस्तैदी की जितनी तारीफ की जाय, थोड़ी है। मैं एक बात सोचता हूँ।

अकबर— कौनसी बात ?

तहव्वुरखाँ—मैं सोचता हूँ कि अगर यह बहादुर कौम हमारी

अकबर— तो मैं क्या करूँ ?

आजम— जो ठीक समझो। बादशाह बहुत नाराज हैं।

[जाता है]

अकबर— सुना तुमने तहव्वुर ! आजम ने लड़कर शिकस्त खाई है। शर्म नहीं आती, बेगम तक क़ैद कर ली गईं। मगर समझ गया, आजम ने मेरे खिलाफ अब्बा को भरा है।

तहव्वुरखाँ—देखा नहीं, कैसी टेढ़ी नजर से देखते थे।

अकबर— तुम राजपूतों की मदद को क्या कहते थे—कहो !

तहव्वुरखाँ—आप उनकी मदद खरीदने को राजी हैं।

अकबर— खरीदने को ?

तहव्वुरखाँ—नहीं तो क्या, आप नहीं तो आजम, मुअज्जम कोई न कोई तो खरीदेगा ही।

अकबर— (उतावली से) यह न होने पाएगा। मैं यह मदद खरीदूँगा।

तहव्वुरखाँ—चाहे जिस कीमत पर ?

अकबर— चाहे जिस कीमत पर। तुम राजपूतों से बातें करो।

तहव्वुरखाँ—मैं बात कर चुका हूँ शाहजादा ! मगर एक अर्ज है ?

अकबर— कैसा अर्ज ?

तहव्वुरखाँ—आप बादशाह होंगे तो—बन्दा वजीर-ए-आजम होगा।

अकबर— मैं मंजूर करता हूँ।

तहब्बुरखाँ—तो अब आप आराम करें। मैं सब ठीक-ठीक कर लूँगा।

[जाता है]

[पर्दा बदलता है]

नवाँ दृश्य

[स्थान—राणा की छावनी : महाराणा और उनके सामन्त बातें कर रहे हैं। सेना पड़ाव डाले पड़ी है : समय—प्रातःकाल।]

गोपीनाथ राठौर—अन्नदाता की जय हो! प्रबल प्रतापी मुगल बादशाह आलमगीर देवरी की घाटी में अपनी तमाम सेना सहित फँस गया है। अब क्या आज्ञा होती है?

राणा— धन्य है आपकी वीरता और तत्परता, विस्तार से कहो, कैसे क्या हुआ।

गोपीनाथ राठौर—महाराज, हमारे एक चर ने मार्गदर्शक होकर बादशाह को घाटी में ला फँसाया। इस पर बादशाह अपनी तमाम फौज, खजाना लिए मेवाड़ को जड़-मूल से रौंदने के इरादे से चला था। सब से आगे रास्ता दुरस्त करने वाली फौज थी। उनके पास हथियार गंड़ासा, फावड़ा और कुदाली थे। ये लोग दरख्त काटते, गड्ढे पाटते, रास्ता बनाते बढ़

और बीच में कुमार जयसिंह की सेना मिले तो उसे कुचल डालें। फिर दोनों फौजें मिलकर उदयपुर में घुस पड़ें और राज्य को तहस-नहस कर डालें। पर जब उसकी नजर घाटी के बगल की पहाड़ियों पर चढ़ी राजपूत सेना पर पड़ी तो उसके होश उड़ गए। वह तुरन्त समझ गया कि बगल में दुश्मन को छोड़ कर आगे बढ़ना बड़े खतरे का काम है। वह अभागा अब पलट कर लड़ भी नहीं सकता था। क्योंकि उस तंग दर्रे में फौज को पलट कर युद्ध के लिए तैयार करना सम्भव ही न था। न उतना वक्त ही था। उसे भय था कि ज्योंही फौज को घुमाया जायगा, राजपूतों की सेना उस पर टूट पड़ेगी और आनन-फानन में उसकी फौज के दो टुकड़े हो जाएँगे और तब एक हिस्से को बड़ी ही आसानी से काट डाला जायगा।

राणा— उसका यह सोचना बिलकुल ठीक था। इसके बाद क्या हुआ?

गोपीनाथ राठौर—सामने जयसिंह की सेना का भय था। आगे बढ़ना सम्भव न था पीछे रसद लुटने का डर था। लौटने का भी कोई उपाय न था। बादशाह सेना की गति रोक कर विमूढ़ हो बैठा।

राणा— विमूढ़ होना ही था।

गोपीनाथ राठौर—निरुपाय उसने हमारे भेदिए की शरण ली। और उसे उदयपुर का नया मार्ग खोजने को कहा। वह बादशाह को उसी सँकरीले दर्रे में घुमा ले गया, जहाँ हमारी तमाम मोर्चे-बन्दी तैयार थी, बादशाह ने सेना को लौटाने का हुक्म दिया, पर उसका सिलसिला उल्टा हो गया। सेना का पिछला हिस्सा पहले दर्रे में घुसा।

राणा— (हँसकर) यह बिना मौत मरना हुआ।

गोपीनाथ राठौर—महाराज! बादशाह ने हुक्म दिया कि तम्बू और फालतू चीजें उदयसागर के रास्ते जाँय। वह सेनापति तह्वरखाँ को आगे करके, पैदल सिपाहियों और तोपखाने को लेकर दर्रे में घुस पड़ा। उसके घुसते ही हम चीते की भाँति छलाँग मारकर उस पर टूट पड़े और क्षणभर में फौज के दो टुकड़े हो गए। उनमें का एक टुकड़ा तो बादशाह के साथ दर्रे में घुस गया, दूसरा हमने सामने होकर काट डाला। यह वह भाग था, जहाँ बेगमात थीं। वह कुहराम मचा कि जिसका नाम। अहदी जो बेगमों की रक्षा के लिए तैनात थे, कोई हथियार न चला सके। सब बेगमात, सारा खजाना और रसद हमारे कब्जे में आगईं। बादशाह दर्रे में घिर गया। दर्रे के उस पार कुमार जयसिंह की चौकी है। इस पर विक्रम-

सिंह का थाना है। पहाड़ की चोटियों पर ५० हजार भील भारी-भारी पत्थरों को इकट्ठा किए—तीर-कमान लिए श्रीमानों की आज्ञा की प्रतिक्षा में है। आलमगीर भूखा, प्यासा असहाय दर्रे में कैद है।

राणा— वाह, यह अगाध्य साधन हुआ।

गोपीनाथ राठौर—(हाथ जोड़कर) महाराज, अब दो बातें विचारणीय हैं। पहिली बात बेगमात के सम्बन्ध में है। उनका क्या किया जाय।

राणा— उन्हें आदरपूर्वक सभी महलों में भेज दिया जाय और महारानी चारुमती को उनकी पहुनाई करने दी जाय। इसके लिए हम अलग पत्र महाराणी को लिखेंगे। खाद्य-सामग्री जो अपने काम को न हो, दुखाय और डोमों को लुटा दी जाय और लूटा हुआ खजाना दीवानजी के सुपुर्द कर दिया जाय।

गोपीनाथ राठौर—जो आज्ञा, ऐसा ही होगा। [जाता है]

[पर्दा बदलता है]

दसवां दृश्य

[स्थान—अरावली का वन दर्रा। बादशाही फौज बेबसी से परेशान हो धीरे-धीरे बढ़ रही है। बादशाह एक घोड़े पर सवार है। कुछ सरदार परेशान इधर-उधर चल रहे हैं। समय—सन्ध्याकाल।]

अलीगोहर—हुज़ूर, सूरज डूब गया। दर्रे में खौफ़नाक अँधेरा बढ़ रहा है। हमारे पास रोशनी का कुछ भी बन्दोबस्त नहीं है। आगे बढ़ना मुश्किल है।

बादशाह— इस ख़ौफ़नाक दर्रे के दूसरे मुहाने का पता लगा?

अलीगोहर—ठीक-ठीक नहीं, क्योंकि वहाँ तक पहुँचने का रास्ता नहीं है। प्यादे और सवार ठसाठस भरे हैं। मगर मालूम होता है, मुहाना कटे दरख़्तों और पत्थरों से बन्द कर दिया गया है और उधर जयसिंह की फौज लड़ने को मुस्तैद खड़ी है। उधर एक तो बाहर निकलने की गुन्जाइश ही नहीं, क्योंकि रास्ता साफ करने वाली फौज हमसे कटकर पीछे पड़ गई है। फिर निकलने पर एक भी आदमी जिन्दा न बचेगा। पहाड़ों पर चीटियों की मानिन्द भील फिर रहे हैं। ज्यों ही हमने आगे कदम बढ़ाया कि भारी-भारी पत्थर और तीर हमारा भुरता निकाल देंगे।

बादशाह— यहाँ रात काटना भी मौत को गले लगाना है। मगर मजबूरी है। यहीं पड़ाव डाला जाय।

अलीगोहर—हुज़ूर, डेरा-तम्बू तो सब लुट गए। होते तो गाड़ने की यहाँ जगह नहीं। बस, यही होगा कि जो जहाँ है, खड़ा रहे! हुज़ूर, इस पत्थर की चट्टान पर आराम करें।

बादशाह— मगर घोड़ों और सिपाहियों की रसद का क्या होगा?

अलीगौहर—हुजूर, इस दर्रे में न एक बूँद पानी—न एक तिनका घास। महज पत्थरों के छोटे-बड़े ढोके हैं। सिपाही चाहें तो उन्हें पेट से बाँध कर रात काट सकते हैं।

[एक प्यादा कठिनाई से आता है]

प्यादा— खुदावन्द, दुश्मनों ने बेगमात, खजाना, तोपखाना और रसद लूट ली है। और आधी फौज जो दर्रे से बाहर रह गई थी, काट फेंकी। अब दुश्मन मुस्तैदी से दर्रे का मुँह रोके बैठा है। वहाँ उसने हमसे छीना हुआ तोपखाना लगा रखा है।

बादशाह— (माथा पीटकर) या अल्लाह, आज तूने आलमगीर को यह दिन दिखाया। आज जीता बचा तो समझूँगा।

अलीगौहर—जहाँपनाह, यहाँ से जीते निकलने की कोई तरकीब नजर नहीं आ रही है।

बादशाह— (गुस्से से होंठ चबाकर) जैसी खुदा की मर्जी, फिलहाल जैसे मुमकिन हो यह रात काटी जायगी। जो इन्त-जाम मुमकिन है, करो। मैं जरा नमाज पढ़ूँगा।

[घोड़े से उतर कर नमाज पढ़ता है]

[पर्दा गिरता है]

ग्यारहवाँ दृश्य

[स्थान—राणा की छावनी : चुने हुए सरदार और राणाजी बातें कर रहे हैं। समय—दोपहर ।]

राव केसरीसिंह—श्रीमान्! पेट की आग से जलकर मुगल शहन्शाह नरम होगया है। उसने सुलह का पैगाम भेजा है।

कुमार भीमसिंह—उसकी बात का क्या विश्वास ? नहीं, इस वार उसे सर्वथा नष्ट कर दिया जाय। वह यहीं भूख प्यास से तड़प-तड़प कर मरे। मर जाने पर हम डोमों के हाथों से उसे गोर दिला देंगे।

राणा— (हँसकर) इस समय यह तो बहुत आसान है कि उसे यहीं सुखा-सुखा कर मार डाला जाय परन्तु औरंगजेब के मरने से मुगल-शक्ति का नाश नहीं हो जायगा, उसके बाद इसका बेटा बादशाह होगा, उसकी मातहती में दक्षिण की विजयिनी सेना इसी पड़ाव के उस पार पड़ी हुई है। और भी उसको दो विशाल सेनाएँ मेवाड़ के अंचल पर अभी मुकीम हैं। इन सबको क्या हम नष्ट कर सकते हैं ? उनसे हमें आज नहीं तो फिर कभी सुलह करनी होगी। जब सुलह करनी है तो उसके लिए यही सबसे अच्छा अवसर है। फिर ऐसा अवसर हमें नहीं मिलेगा।

मन्त्री दयालशाह—अन्नदाता, और कुछ न मिले, पर यह महा

पापी तो मरे।

राणा— मुगल साम्राज्य को यों ही नहीं उखाड़ा जा सकता। हमें अपनी शक्ति पर भी विचार करना चाहिए।

मन्त्री दयालशाह—परन्तु महाराज, इसी बात का क्या भरोसा है कि बादशाह सन्धि की शर्तों का पालन करेगा? वह बड़ा ही क्रूर [illegible] सतरे से [illegible]

राणा— [illegible]—(देखकर) क्या है? बादशाह की बेगम, चिलम भरे? यह गुस्ताखी! खुदा की कसम, मैं इसे बरदाश्त नहीं कर सकती।

चारुमती—बादशाह की बेगम जब थीं तब थीं अब मेरी बाँदी हो, फटपट चिलम भरो।

उदयपुरी बेगम—तुम्हारा इतना मकदूर......

चारुमती—चुप, अदब से बात कर! आज तुम हमारी चिलम भरो। कल बादशाह आलमगीर राणा का उगालदान उठायेगा। (निर्मला से) इस बाँदी को लेजा।

निर्मला— उठो, यह चिलम-तमाखू और आग है।

उदयपुरी बेगम—तुम सब कम्बख्तों को सजा मिलेगी। मैं उदयपुर का नामोनिशान मिटा दूँगी।

चारुमती—मैं चाहती थी कि तुम्हारे साथ असमनशाहत में [illegible] पाऊँ मगर तुम्हारे इस गुरूर ने मेरी कोमल [illegible] नष्ट हो गई। महाराणा ने बादशाह को जी[illegible] दिया और तुम सबको भी जाने का हुक्म

राणा— सौदा करना व्यर्थ है। बादशाह सन्धि की शर्तें स्वीकार करे, तो बेगमात छोड़ दी जावेंगी।

[पर्दा बदलता है]

बारहवाँ दृश्य

भरो और चली जाओ ! चारुमती एक गद्दी पर

उदयपुरी बेगम—(रो कर) मैं तमाखू भरना नहीं जा.......

चारुमती— (निर्मला से) किसी बाँदी से कह कि इन्हें तमाखू भरना सिखा दे।

[दो-तीन बाँदी निर्मला के इशारे से आती हैं]

बाँदी— चलो, उठाओ चिलम !

उदयपुरी बेगम—(तकदीर पर हाथ धर कर) हाय किस्मत !

[तमाखू भरती है]

बाँदी— जाओ बेगम ! आलमगीर से तमाम हाल कह देना।

[बेगम चुपचाप जाती है]

चारुमती— (निर्मला से) ला अब शाहजादी को।

[निर्मला जाती है]

चारुमती— इस औरत की बहुत तारीफ सुनी है। सुना है रंग-महल में इसी की तूती बोलती है।

[शहजादी आती है]

चारुमती— (उठकर मखमली कुर्सी की ओर इशारा करके) बैठिए शाहजादी !

जेबुन्निसा—(बैठ कर) शुक्रिया, आप भी तशरीफ रखिए, महारानी !

चारुमती—(बैठ कर) शाहजादी को बहुत तकलीफ हुई होगी। यहाँ न दिल्ली के रंगमहल के सामान, न सुविधाएँ।

शाहजादी—आप एक कैदी की इस कदर खातिर करती हैं, महारानी ! जहाँ आप हैं, वहाँ क्या नहीं है।

चारुमती—आप कैदी नहीं हैं, शाहजादी हैं। कहिए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकती हूँ।

शाहजादी—आपकी शराफत मैं नहीं भूलूँगी। कहिए, आपकी कुछ खिदमत भी बजा ला सकती हूँ।

चारुमती—बहुत कुछ। यदि आप शहनशाह को यह समझा दें कि शहनशाह अपने मुल्क का मा-बाप होता है और उनकी रियाया उनकी औलाद। चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान—उन्हें एक ही नजर से देखना उनका धर्म है।

शाहजादी—महारानी, सल्तनत की पेचीदगी और उलझनें बादशाहों से बहुत से ऐसे काम करा देती हैं जिन्हें सब लोग नहीं समझ पाते। ताहम, मैं आपके खयालात को दाद देती हूँ।

चारुमती—(निर्मला से) शाहजादी को इत्र-पान दे।

[इत्र-पान देकर विदा करती है]

[पर्दा गिरता है]